चन्दामामा
नवम्बर १९८६
२.५० रु

लाइफ़बॉय है जहां
तन्दुरुस्ती है वहां

डायमंड कामिक्स में

48 पृष्ठों में मनोरंजन ही मनोरंजन

कार्टूनिस्ट प्राण का प्रसिद्ध चरित्र चाचा चौधरी और साबू का बिल्कुल नया कारनामा

चाचा चौधरी और हकीम जमालगोटा 5/-

इस माह के अन्य नये डायमंड कॉमिक्स
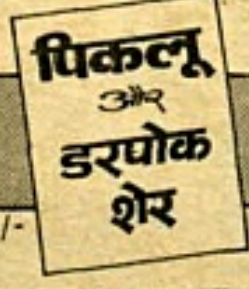
पिकलू और डरपोक शेर 4/-

अंकुर बाल बुक क्लब——

डायमंड कॉमिक्स की बच्चों के लिये नई निराली अनुपम योजना अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनिये और हर माह घर बैठे डायमंड कॉमिक्स डाकव्यय की फ्री सुविधा के साथ प्राप्त करें।

सदस्य बनने के लिए आपको क्या करना होगा :–

1. संलग्न कूपन पर अपना नाम व पता भर कर भेज दें। नाम व पता साफ-साफ लिखें ताकि पढ़ने में आसानी हो।
2. सदस्यता शुल्क तीन रुपये मनी आर्डर या डाक टिकट द्वारा कूपन के साथ भेजें। सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
3. हर माह पांच पुस्तकें एक साथ मंगवाने पर 2/-की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री की सुविधा दी जायेगी।
4. आपको हर माह Choice कार्ड भेजा जायेगा यदि आपको निर्धारित पुस्तकें पसन्द हैं तो वह कार्ड भरकर हमें न भेजें।
5. इसी योजना के अन्तर्गत हर माह की 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी।

– – – – – सदस्यता कूपन – – – – –

मुझे अंकुर बाल क्लब का सदस्य बना लें। सदस्यता शुल्क तीन रुपये मनी आर्डर/डाक टिकट से साथ भेजा जा रहा है। (सदस्यता शुल्क प्राप्त न होने की स्थिति में आपको सदस्यता नहीं दी जायेगी) मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूँ।

नाम ....

पिता का नाम ....

पता ....

डाकखाना ....

जिला ....

लोक एवं नीति कथाएँ
पंचतंत्र 6/-

एक अनमोल पुस्तक
हितोपदेश 6/-

सचित्र जीवनी सहित
सुनील गावस्कर 10/-

युवा हृदय सम्राट
कपिल देव 6/-

क्रिकेट कैसे खेलें 6/-

जूडो कराटे व बॉक्सिंग कैसे सीखें 6/-

डायमंड कॉमिक्स डाइजेस्ट

☐ चाचा चौधरी डाइजेस्ट I	12.00	☐ राजन इकबाल डाइजेस्ट	12.00
☐ चाचा चौधरी डाइजेस्ट II	12.00	☐ फौलादी सिंह डाइजेस्ट	12.00
☐ लम्बू मोटू डाइजेस्ट	12.00	☐ मोटू पतलू डाइजेस्ट	12.00
☐ ताऊजी डाइजेस्ट	12.00	☐ चाचा भतीजा डाइजेस्ट	12.00

डॉयमन्ड नॉलिज गाइड

जनरल नालिज की अनुपम पुस्तक
ज्ञान विज्ञान का भंडार 10/-

डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

Publico/Dc/Nov/86

चन्दामामा

नवम्बर 1986

★

विषय-सूची

★

एक प्रति : २-५०

वार्षिक चन्दा : ३०-००

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस माह की बेताल कथा का शीर्षक है 'वचन-भंग' और इसके लेखक हैं श्री ए. विद्यासागर ।

अगर मनुष्य में व्यवहार कुशलता, बुद्धिमत्ता और समय की सूझ न हो तो वह धन-अर्जन करने में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता । पर इन गुणों के साथ अगर उसमें धन का लोभ बहुत अधिक हो तो यह एक दुर्गुण उसे किस तरह हास्यास्पद् बना देता है, इसका परिचय आप पायेंगे 'गोदान' शीर्षक कहानी में ।

अमर वाणी

तावद् भयस्य भेतव्यं, यावद् भयमनागतम् ।
आगतं च भयं वीक्ष्यं नरः कुर्याद् यथोचितम् ॥

[भयकारी किसी विपदा अथवा अनिष्ट से तभी तक डरना चाहिए, जब तक वह हमारे सामने आ न जाये, किन्तु सामने उपस्थित होने पर उससे मुक्त होने के लिए यथोचित करना हमारा कर्तव्य है ।]

वर्ष : ३९ नवम्बर १९८६ अंक : ३

एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००

'चन्दामामा' के संवाद

आबादी की जटिल समस्या

इस शताब्दी के अंत तक तीन महानगर बम्बई, कलकत्ता एवं दिल्ली विश्व के सर्वाधिक आबादीवाले दस महानगरों की सूची में जुड़ जायेंगे। आज विश्व की अधिकतम आबादी वाले नगर मैक्सिको में एक करोड़ अस्सी लाख लोग रहते हैं। संयुक्त-राष्ट्र-संघ के एक वक्तव्य से यह पता चलता है कि यह शताब्दी पूरी होने के वर्ष में उस नगर की आबादी दो करोड़ साठ लाख से भी अधिक हो सकती है। इसके अलावा सावापोलो की आबादी दो करोड़ चालीस लाख तक पहुँचने की संभावना है और इस तरह शताब्दी के अंत में वह दूसरा सर्वाधिक आबादीवाला नगर हो जायेगा। तीसरा स्थान मिलेगा एक करोड़ सत्तर लाख की आबादी प्राप्त करनेवाले जापान के टोक्यो-योकोहोमा को।

विकलांग का पर्वतारोहण

योषियोपुरूची नाम का एक व्यक्ति एक दुर्घटना के चंगुल में फँसकर अपने पैर तोड़ बैठा, फिर भी पर्वतारोहण में उसकी गहरी रुचि और उत्साह वैसा ही बना रहा। उसने अपने कुछ मित्रों एवं शेर्पाओं की मदद से हाथों में बर्फीले जूते पहनकर हिमालय-पर्वत का आरोहण किया। विकलांग होने के बावजूद उसने इससे पहले जापान के त्यूजी शिखर का आरोहण किया था।

लंबी मूँछें

केलिफोर्निया के व्यूहाल का निवासी जिम मिचल नाम के एक बुजुर्ग की विश्व भर में सबसे लंबी मूँछें हैं। १७ से.मी. लम्बी इन मूँछों को बढ़ाने के लिए जिम मिचल ने पाँच वर्ष तक बड़ी सावधानी के साथ प्रयत्न किया था।

ऊर्वशी

प्राचीन काल में एक बार नर और नारायण तपस्या कर रहे थे। उनकी तपस्या को भंग करने के विचार से इन्द्र ने कुछ अप्सराओं को पृथ्वी-लोक में भेजा। नारायण ने उन अप्सराओं को देखकर अपने ऊरु पर नाखून से खरोंचा और स्वर्ग की सारी अप्सराओं के सौन्दर्य को मात करनेवाली एक सुन्दर युवती की सृष्टि की। उसके अद्भुत सौन्दर्य को देख अप्सराएँ शर्मिन्दा होकर चली गयीं। ऊरु से उत्पन्न होने के कारण उसका नाम ऊर्वशी पड़ा। इसके बाद वह भी इन्द्र की सभा-नर्तकियों में जा मिली।

एक दिन चक्रवर्ती पुरूरवा पृथ्वी लोक से स्वर्ग लोक को गये। वहाँ उन्होंने देवताओं की सभा में ऊर्वशी का नृत्य देखा। उसकी कला और सुंदरता से पुरूरवा उस पर मुग्ध हो गये और उन्होंने उसके साथ विवाह करने का निश्चय किया। ऊर्वशी ने भी पुरूरवा का वरण किया। इन्द्र ने भी इस विवाह को अपनी सहर्ष स्वीकृति दी। ऊर्वशी और पुरूरवा विवाह करके पृथ्वी लोक में आये और सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे।

चार वर्ष बीत गये। इस बीच देवताओं को ऊर्वशी का अभाव अखरने लगा। वे उसे किसी भी तरह स्वर्ग में वापस लाने का प्रयत्न करने लगे। एक आंधी-तूफान की रात में कुछ गन्धर्व भूलोक में आये और ऊर्वशी के कक्ष से हिरन-शावकों को चुरा ले गये। उन शावकों की खोज में ऊर्वशी आकाश-मार्ग में संचरण करने लगी। अवसर पाकर गन्धर्व उसे देवलोक में ले गये।

इधर पृथ्वी पर ऊर्वशी को न पाकर पुरूरवा व्याकुल हो उठे। उन्होंने सर्वत्र ऊर्वशी की खोज की और अन्त में देवताओं के अनुग्रह से ऊर्वशी से पुनः मिल सके। ऊर्वशी-पुरूरवा सुखपूर्वक रहने लगे।

चन्द्रभानु का गोदान

नरसिंहपुर गाँव में एक गृहस्थ रहता था, नाम था चन्द्रभानु। वह अव्वल दर्जे का कंजूस और संगदिल आदमी था। एक बार वह बीमार पड़ा। उसने अपनी बीमारी का इलाज कराया, पर कोई फ़ायदा न हुआ।

चन्द्रभानु की माँ शान्ता ने बेटे को समझाते हुए कहा—"बेटा, एक बार तुम्हारे पिता इसी प्रकार की बीमारी के शिकार हो गये थे। उन्होंने एक श्रेष्ठ ब्राह्मण को गोदान किया था। तुरन्त ही उनकी बीमारी अदृश्य हो गयी थी।

"माँ, मेरी बीमारी का गोदान के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है।" चन्द्रभानु ने अपनी माँ की बात काटते हुए कहा।

असली बात यह थी कि अपनी बीमारी के लिए चन्द्रभानु गोदान के खर्च में नहीं पड़ना चाहता था।

शान्ता ने फिर कहा—"बेटा, हम जो पाप करते हैं, वे ही हमें रोगों के रूप में सताते हैं। रोगों से हमें पुण्यकार्य करने की प्रेरणा और सीख लेनी चाहिए। यह एक चेतावनी है बेटा। तुम्हारा स्वभाव मुझसे छिपा नहीं है। तुम धन को केवल जोड़ना जानते हो, तुम्हें यह कंजूसी अपने स्वर्गवासी पिता से विरासत में मिली है।"

चन्द्रभानु के स्त्री-बच्चों ने भी गोदान करने के लिए उस पर ज़ोर डाला।

विवश होकर चन्द्रभानु ने रामशर्मा नाम के एक ब्राह्मण को बुलवा भेजा और उसे एक गाभिन गाय दान देकर बोला—"शर्मा जी, जब गाय के बच्चा हो—बछड़ा या बछिया, तो आप उसे मुझे दे दीजियेगा। भला, आप उसका क्या करेंगे? वैसे भी मैं आप को केवल गाय दान में दे रहा हूँ।"

राधा गोस्वामी

कुछ दिनों बाद गाय ने बछड़ा दिया। यह बात मालूम होने पर चन्द्रभानु उसे पाने के लिए बेचैन हो उठा। वह प्रतिदिन रामशर्मा के घर बछड़े को देखने के बहाने जाने लगा।

इसी तरह एक सप्ताह बीत गया। एक दिन चन्द्रभानु से रहा नहीं गया। उसने रामशर्मा से पूछा—"शर्माजी, गाय अच्छी तरह दूध दे रही है न?"

"साहू जी, यह गाय तो देवता अंशवाली है। हर रोज कम से कम चार सेर दूध देती है।" रामशर्मा ने कहा।

रामशर्मा स्वभाव से बड़ा संकोचशील ब्राह्मण था। उसने चन्द्रभानु को खुश करने के ख्याल से दो सेर दूध का बढ़ाकर चार सेर कर दिया था।

रामशर्मा के मुंह से चार सेर का नाम सुनकर चन्द्रभानु का दिल धड़क उठा। उसके पास अपनी कई गायें थीं, पर कोई भी गाय इतना दूध नहीं देती थी।

"शर्माजी, अगर यह गाय इतना अधिक दूध देती है तो मेरे विचार से उसके दूध में वह गुण, वह स्वाद तो नहीं होगा!" चन्द्रभानु ने पूछा।

अगर रामशर्मा यह उत्तर दे देता कि दूध गुण और स्वाद में हल्का है तो शायद चन्द्रभानु कुछ हद तक सन्तुष्ट अवश्य हो

रामशर्मा ने कुछ विचलित होकर कहा—"साहू जी, माँ और बच्चे को अलग-अलग करना तो बड़ा पाप होगा।"

"देखिये, मनुष्य और पशु का न्याय अलग-अलग होता है। आप जिस न्याय या पाप की बात कर रहे हैं, वह मनुष्यों पर लागू होता है, पशुओं पर नहीं। फिर भी आप इतना कर सकते हैं कि गोवत्स जब दूध पीना बन्द कर दे, तभी आप उसे मुझे दें।" चन्द्रभानु ने कहा।

रामशर्मा ने चन्द्रभानु की बात स्वीकार कर ली और गाय को अपने घर हांक ले गया। दूसरे ही दिन चन्द्रभानु की बीमारी इस तरह गायब हो गयी, मानो जादू हो गया हो।

गया होता । कम से कम उसे एक उत्तम गाय से वंचित होने का दुख तो न होता ।

पर रामशर्मा में चन्द्रभानु जैसी चालाकी नहीं थी । उसने अपने यजमान को प्रसन्न करने के विचार से कहा—"साहू जी, आप ने जिस धार्मिक भावना से यह गाय मुझे दान दी है, उसके कारण इस गाय के दूध का स्वाद वर्णनातीत है । शायद अमृत इसी प्रकार का होता होगा ।"

"अच्छा! तब तो इस दूध का स्वाद मुझे भी चखना चाहिए ।" चन्द्रभानु ने बड़ी तत्परता से कहा । रामशर्मा ने तत्काल लोटा भर दूध मँगवाया और चन्द्रभानु को दिया । दूध सुस्वादु था ।

दूध पीकर चन्द्रभानु की चिन्ता और बढ़ गयी । वह घर लौट आया । उस पूरी रात उसे नींद नहीं आयी ।

दूसरे दिन सुबह ही सुबह चन्द्रभानु ने रामशर्मा को बुलाकर कहा—"शर्माजी, मैं अजीब किस्म की बीमारी से पीड़ित हूँ । आप के यहाँ दूध पिया तो बड़ा आराम मिला । मुझे अब तो पूरा विश्वास हो गया कि सचमुच ही उस गाय के अन्दर देवता का अंश है । उसके दूध में निश्चय ही अमृत का प्रभाव है । आप ने कहा था कि गाय प्रतिदिन चार सेर दूध देती है, इसलिए मेरी विनती है कि आप हर रोज मेरे घर दो सेर दूध भेज दिया कीजिये । बस, जब मैं स्वस्थ हो जाऊँ, तब आप दूध बन्द कर दीजियेगा ।"

चन्द्रभानु की बात सुनकर रामशर्मा हक्का-बक्का खड़ा रह गया । फिर भी वह कुछ प्रतिवाद नहीं कर पाया और 'अच्छा!' कहकर अपने घर चला गया ।

शान्ता ने जब अपने बेटे की करतूत सुनी तो उसे डाँट कर कहा—"बेटा! यह अधम काम है । अगर तुम गाय को दान करके उसका दूध लोगे तो तुम्हारा पुण्य नष्ट हो जायेगा ही और उल्टे तुम पाप के भागी बनोगे । तुम ऐसा मत करो!"

"अगर पुण्य नष्ट हो गया होता, तो मैं फिर से बीमारी का शिकार हो जाता। तुम चिन्ता मत करो!" चन्द्रभानु नें तर्क दिया।

उस दिन से रामशर्मा गाय का पालक मात्र रह गया। सारा दूध तो चन्द्रभानु के घर जाने लगा।

कुछ दिन बीत गये। चन्द्रभानु पुनः बीमार पड़ा। उसने डर कर रामशर्मा से दूध लेना बन्द कर दिया। पर चन्द्रभानु की बीमारी घटी नहीं। वैद्य बराबर उसे दवाइयाँ देता, पर बीमारी ऐसी थी कि टलने का नाम नहीं ले रही थी।

चन्द्रभानु अपनी कृपण बुद्धि से यही सोचता रहता कि जब मैंने रामशर्मा से दूध लेना बन्द कर दिया है तो मुझे क्यों नही ठीक होना चाहिए। वह अब भी अपने को गोदान के पुण्य का पूरा अधिकारी मानता था। एक दिन अचानक एक साधु आकर चन्द्रभानु के मकान के सामने खड़ा हो गया और बोला—"इस घर में पाप का निवास है। इस पाप से मुक्ति होनी चाहिए!"

साधु के शब्द सुनकर शान्ता ने उसे अन्दर बुलवाया और अपने पुत्र की बीमारी की जाँच करने का आग्रह किया। साधु ने चन्द्रभानु की जाँच करके और उसकी माँ शान्ता से सारा किस्सा सुनकर कहा—"तुम्हें गोदान का पुण्य प्राप्त नहीं हुआ है, बल्कि दूध की चोरी का पाप लग गया है।"

चन्द्रभानु ने दीनता भरे स्वर में पूछा—"स्वामी जी, ऐसा क्यों हुआ? मैंने तो गाय को दान ही कर दिया था। उसका दूध भी कुछ दिन तक तो पंडित रामशर्मा के परिवार ने ही पिया था?"

"तुम जैसे कंजूस लोगों के पापों के लिए भगवान ही प्रत्यक्ष रूप से प्रमाण दे सकते हैं। गोदान के पुण्य ने तत्काल संजीवनी जैसा काम किया और तुम बीमारी से मुक्त हो गये। अगर तुम्हारे अन्दर सद्बुद्धि होती तो तुम इस प्रत्यक्ष प्रमाण के आधार से पुण्यात्मा बन गये होते और दान की महिमा को समझते। पर तुमने

स्वस्थ होते ही प्रवंचना करके रामशर्मा से दूध हरण करना आरंभ कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि तुम फिर से बीमार हो गये। अब रामशर्मा के मन में यह भीति है कि स्वस्थ हो जाने पर तुम फिर से उससे दूध माँगोगे। उसके मन का भय ही तुम्हारे नीरोग होने में बाधा बना है।"

"स्वामीजी आप बताइये, मुझे क्या करना चाहिए?" चन्द्रभानु ने पूछा।

"दूध का यह हरण पाप का कारण बन गया है। इस पाप से मुक्त होने के लिए तुम्हें एक और गाय किसी श्रेष्ठ ब्राह्मण को दान करना होगा।" साधु ने कहा।

"अच्छी बात है। वह गोदान मैं आप को ही कर देता हूँ।" चन्द्रभानु ने कहा।

"मैंने आज तक किसी को दान नहीं किया है, इसलिए दान देने का पुण्य मुझे प्राप्त नहीं।" साधु ने कहा।

"तब तो आप ही बतायें, किस पुण्यात्मा को यह दान देना ठीक होगा?" चन्द्रभानु ने पूछा।

"इस गाँव में तो सब से बड़ा पुण्यात्मा रामशर्मा ही है। उसे दूध दान देने का पुण्य प्राप्त हो गया है।" साधु ने कहा।

यह बात सुनकर चन्द्रभानु अवाक् रह गया। साधु मुस्करा कर बोला–"तुमने जब गोदान किया, तब उस दान को लेनेवाला व्यक्ति अगर किसी को दूध का दान देता तो तुम्हें उसका पुण्य प्राप्त होता। पर रामशर्मा ने दूध तुम्हें दिया, इसलिए तुम्हें उस दूध को चुराने का पाप लगा है और उस ब्राह्मण को दूध दान करने का पुण्य प्राप्त हुआ है। अब तुम्हें यह कड़ुवा अनुभव प्राप्त हो चुका है। तुम आज से अपनी कंजूसी छोड़ दो।" साधु ने सलाह दी।

इसके बाद चन्द्रभानु ने बछड़ों सहित दो उत्तम गायें रामशर्मा को दान दीं और अपने अपराध के लिए क्षमा माँगी।

चन्द्रभानु शीघ्र ही स्वस्थ हो गया। उस दिन से वह यथोचित दान-पुण्य करते हुए सुखी-स्वस्थ जीवन बिताने लगा।

नया घुड़सवार

जैसलमेर में महाराजा रत्नदेव का शासन था। राजा रत्नदेव को घोड़ों का बहुत अधिक शौक था। उनके अस्तबल में फारसी और अरबी नस्ल के घोड़े ही नहीं, बल्कि बर्मा, स्याम एवं सिंहल देशों से मँगाये गये अनेक क़ीमती घोड़े थे।

राजा के पास उत्तम नस्ल के घोड़े ही नहीं थे, बल्कि अश्व शिक्षण में प्रवीण लोग एवं कुशल घुड़सवार भी थे। कभी-कभी राजा रत्नदेव को जब यह समाचार मिलता कि पड़ोसी देशों में कोई विशेष कुशल प्रशिक्षक अथवा घुड़सवार है तो वे उन्हें और भी बड़े वेतनों का लोभ दिखाकर अपने राज्य में बुलवा लेते थे। राजा रत्नदेव के मन में अपने राज्य के कुशल व्यक्तियों के प्रति हल्की भावना रहती थी।

एक दिन राजा रत्नदेव के पास एक गुप्तचर आया और बोला—"महाराज, मैंने कुछ देर पहले वीरभद्र नाम के एक घुड़सवार से बात की है। वह वैशाली नरेश के पास जा रहा था। उसकी विशेषता यह है कि वह दो दिन और दो रात अविराम घुड़सवारी कर सकता है। वह वैशाली की राजधानी पहुँचने से पहले रास्ते में विष्णुपुर नाम के एक नगर में एक सप्ताह तक रुकेगा। वहाँ उसे अपने एक मित्र के विवाह में शरीक़ होना है।"

सारा समाचार सुनकर राजा रत्नदेव उतावली दिखाकर बोले—"वाह, बहुत समय बाद हमें एक श्रेष्ठ घुड़सवार प्राप्त होगा। उसे अगर मैं अपनी सभा में रख सका तो देश-विदेशों में मेरा यश फैल जायेगा कि मेरे पास दो रात और दो दिन अविराम घुड़सवारी करनेवाला एक घुड़सवार है।"

राजा रत्नदेव ने तुरन्त अपने मंत्री बोधराज को बुला भेजा और कहा—

माधव वर्मा

"मंत्रिवर, आप तत्काल एक अश्वारोही को विष्णुपुर रवाना होने का आदेश दीजिये। वहाँ वीरभद्र नाम के एक कुशल अश्वारोही का आगमन होनेवाला है। वह पता कर उसे हमारे राज्य जैसलमेर ले आये!"

मंत्री बोधराज ने राजा से कुछ निवेदन करना चाहा, पर राजा हाथ से मंत्री को चुप रहने का संकेत कर बोले–"बोधराज, तुरन्त एक घुड़सवार को विष्णुपुर भेजिये ताकि वह वहाँ आये महान अश्वारोही वीरभद्र को हमारा संदेश देकर यहाँ ले आये। आप वीरभद्र को यह संदेश भिजवा दें कि हम उसे हर माह सौ स्वर्ण मुद्राएँ दिया करेंगे।"

मंत्री बोधराज ने समझ लिया कि अब राजा से कुछ भी कहना व्यर्थ होगा। उसने राजा के आदेश का पालन किया और अपने एक शीघ्रगामी घुड़सवार सहदेव सिंह को विष्णुपुर के लिए रवाना कर दिया।

सात दिन के बाद घुड़सवार वीरभद्र राजा रत्नदेव के पास पहुँचा और राजा के दिये गये वचन के अनुसार सौ स्वर्ण मुद्राओं के मासिक वेतन पर नौकरी में ले लिया गया। राजा रत्नदेव इस बात से अत्यन्त आनन्दित थे कि एक महान घुड़सवार वैशाली के राजदरबार में नहीं, बल्कि उनके दरबार में सेवारत है।

नया घुड़सवार वीरभद्र बोला–"महाराज, मुझे वैशाली के महाराज ने अपना दरबारी बनाने के लिए निमंत्रित किया था। मैं अभी विष्णुपुर में ही था कि
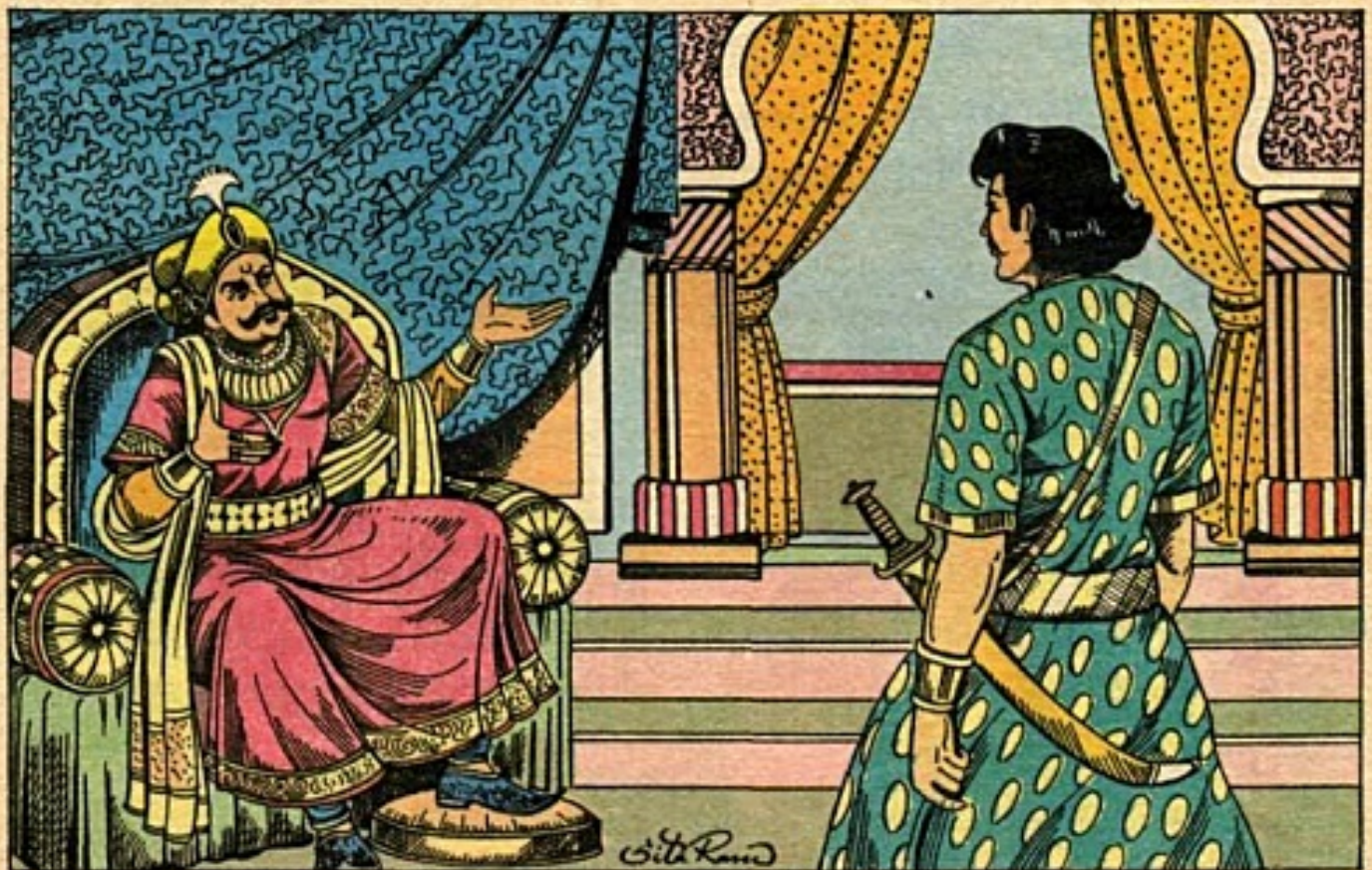
आप का दूत मुझे मिला। आप का प्रस्ताव अधिक प्रलोभनीय था, इसलिए मैंने वैशाली के राज-निमंत्रण को अस्वीकार कर दिया और अब आप की सेवा में आ पहुँचा हूँ!"

घुड़सवार वीरभद्र के मुँह से ये बातें सुनकर महाराजा रत्नदेव फूले न समाये और मंत्री से बोले–"बोधराज, हमने जिस घुड़सवार को विष्णुपुर भेजा था, काम की सफलता के लिए उसे कोई अच्छा पुरस्कार दीजिये!"

"महाराज, उसी घुड़सवार नरसिंह के बारे में मैं आप से कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। विष्णुपुर शीघ्र पहुँचने के लिए उसने तीन दिन और तीन रात अविराम घोड़ा दौड़ाया था। जब यह सूचना वैशाली के राजा को मिली तो उन्होंने तुरन्त अपना दूत भेजा और नरसिंह को जो वेतन हम दे रहे थे, उससे दुगुना वेतन देकर उसे अपने दरबार में नियुक्त कर लिया। यह समाचार मुझे अभी कुछ ही देर पहले मिला है।" मंत्री ने बताया।

मंत्री बोधराज की बात सुनकर महाराजा कुछ लज्जित से होकर बोले–"मंत्री, हमें यह विदित न था कि हमारे ही देश के निवासियों में कुछ ऐसे घुड़सवार भी हैं जो अन्य देशों के घुड़सवारों से टक्कर ले सकते हैं। हम अपने देश के लोगों की प्रतिभा से अनजान रहे और पड़ोसी देशों के लोगों की प्रतिभा से प्रभावित होकर उन्हें ऊँचे वेतनों पर अपने यहाँ नियुक्त करते रहे।"

"यह सत्य है, महाराज!" मंत्री ने राजा के कथन का समर्थन करते हुए कहा।

"बोधराज, हम सोचते हैं कि हमें अपने यहाँ के कलाकौशल का अच्छी तरह पता लगाना चाहिए। हम अपने देश के घुड़सवारों की प्रतियोगिता का आयोजन करते हैं। जो अत्यन्त कुशल प्रमाणित होंगे, उन्हें हम पुरस्कार प्रदान करेंगे।" राजा ने कहा।

मंत्री बोधराज ने तत्काल प्रतियोगिताओं का प्रबन्ध किया। जैसलमेर के घुड़सवारों ने पड़ोसी देशों के घुड़सवारों से टक्कर ली और अपना प्रतिमान स्थापित किया।

[६]

[चित्रसेन अपने अनुचरों के साथ क़िले की तरफ़ चल दिया । इसी बीच उग्राक्ष के द्वारा भेजे गये उसके सेवक चित्रसेन के पास पहुँचे और उसे पुनः उग्राक्ष के पास बुला ले गये । वहाँ चित्रसेन की मुलाक़ात अमरपाल नाम के एक शत्रुपक्षीय आदमी से हुई । उसने ज्वालाद्वीप के निवासियों के बारे में कुछ रहस्य बताये । आगे पढ़िये...]

अमरपाल का यों अचानक मौन हो जाना और आसमान की तरफ़ ताकना चित्रसेन को आश्चर्यजनक लगा । उग्राक्ष को अमरपाल की यह हरक़त बिलकुल पसन्द नहीं आयी । वह क्रोध से लाल हो उठा और अपनी गदा को ऊपर हवा में लहराकर बोला–"अरे, बता, क्या तेरा दिमाग़ फिर गया है? तेरी इस बीमारी की दवा मेरे पास है । क्या तू चाहता है कि मैं अपनी गदा से तेरी यह बीमारी ठीक कर दूं?"

उग्राक्ष के तेवर से अमरपाल थोड़ा भी विचलित नहीं हुआ। उसने मुस्कराकर उग्राक्ष की तरफ़ देखा और बोला–"मेरी मृत्यु के बाद तुम्हारी मृत्यु में अधिक समय न लगेगा । नागवर्मा को तो तुम जानते हो न, जिसने कपिलपुर पर कब्ज़ा कर रखा है? उसकी सहायता करनेवाले ज्वालाद्वीपवासियों तथा

उनके भयंकर पक्षियों ने तुम्हारी देह पर जो अमिट निशान छोड़े हैं, वे अभी हरे ही हैं, तुम उनके बारे में मत भूलो!"

उग्राक्ष समझ गया कि उसके घावों पर बंधी पट्टियों को देखकर अमरपाल उस पर व्यंग कर रहा है। वह क्रोध से कांपने लगा। और अपनी पाषाणी गदा उठाकर उसका सिर फोड़ देने के लिए आगे बढ़ा। चित्रसेन झपटकर उग्राक्ष तथा अमरपाल के बीच जा खड़ा हुआ और आदेश के स्वर में बोला-"उग्राक्ष, रुक जाओ!"

"यह साधारण नर-मानव मुझ राक्षसराज का मज़ाक उड़ाने की धृष्टता करता है?" यह कहकर उसने अपने जबड़े खोले।

"मानवों के प्रति तुम इतनी हल्की धारणा मत रखो, उग्राक्ष! मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह व्यक्ति हमारी सहायता करेगा। अगर ऐसा न हुआ तो फिर तुम इसको अपनी इच्छानुसार सताना।" चित्रसेन ने कहा।

चित्रसेन के मुंह से यह बात सुनकर अमरपाल थर-थर कांप उठा और बोला-"महाराज, यह तो मेरे प्रति बहुत बड़ा अन्याय है। आप ने मेरे प्राणों की रक्षा का वचन दिया है। आप की बात का विश्वास करके ही मैं पेड़ पर से उतरा हूं। वरना, मैं इन राक्षसों के हाथों में पड़ने की अपेक्षा वहीं पर आत्महत्या करता।"

"यह सच है कि मैंने तुम्हें प्राणों की रक्षा का वचन दिया है। पर इसका यह मतलब नहीं कि तुम मेरे प्रश्नों का सही उत्तर न दो और आसमान की तरफ़ ताककर अपनी अर्थहीन चेष्टाओं से हमें मूर्ख बनाने का प्रयत्न करो। अगर तुमने सब सच-सच न बताया तो मुझे भी अपने वचन का पालन करने की ज़रूरत नहीं है।" चित्रसेन ने कठोर स्वर में उत्तर दिया।

"महाराज, मुझे क्षमा कर दीजिये। मैं इस क्षण से आप का सेवक हूं। राजद्रोही बने नागवर्मा के प्रति मेरे मन में किसी प्रकार का आदरभाव नहीं है।

लेकिन मैं नागवर्मा से डरता हूँ। इसी भय के कारण मैं उसके दल में शामिल हो गया था।" अमरपाल ने गिड़गिड़ाकर उत्तर दिया।

"अगर ऐसा है तो सारी बातें सच-सच बता दो। धवलगिरि पर नागवर्मा ने हमला बोल दिया है। क्या उसके सैनिकों के साथ भयंकर पक्षियोंवाले ज्वालाद्वीपवासी भी हैं?" चित्रसेन ने पूछा।

"बहुत संभव है, पर मैं निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकता। कपिलपुर से लगे एक जंगल में लगभग सौ की संख्या में ये भयंकर पक्षी बाघचर्मधारी अपने सवारों के साथ रहते हैं। यह जंगल ही इनका अड्डा है। नागवर्मा ने अपनी प्रजा के कुछ लोगों को ज्वालाद्वीपवासियों को दे दिया है, वे गुलाम बनकर उन दुष्टों की सेवा करते हैं। इसीलिए ज्वालाद्वीपवासी भी नागवर्मा को इस प्रकार की मदद दे रहे हैं।" अमरपाल ने कहा।

"क्या उन भयंकर पक्षियों का संहार करने का कोई उपाय है?" उग्राक्ष ने अपने घावों पर बंधी पट्टियों पर हाथ रखकर पूछा।

"क्यों नहीं? जरूर है। उनकी चोंच तथा नाखूनों से बचा जा सके तो उनकी गरदन को तलवार से टुकड़े-टुकड़े किया जा सकता है। उनकी गरदन अन्य पक्षियों की गरदन के समान ही नाजुक होती है।" अमरपाल ने कहा।

"हहह!" उग्राक्ष जोर से ठठाकर हँस पड़ा। फिर ताल ठोंककर बोला-"इस बार वे दुष्ट दिखाई पड़े तो मैं उन्हें मजा चखाऊँगा।" इस बीच कुछ राक्षस एवं साधारण प्रजा के लोग हाहाकार करते हुए "महानायक! महाराज!" चिल्लाते हुए वहाँ आये।

प्राणों के भय से चीत्कार करनेवाले पास आये राक्षसों तथा प्रजाजनों को देखकर चित्रसेन ने अनुमान लगाया कि फिर से कोई बड़े खतरे की बात हो गयी है।

"चित्रसेन, क्या हम मवेशियों और उनके चरानेवालों की रक्षा के लिए चलें ?" उग्राक्ष ने निरुत्साहित स्वर में पूछा ।

"नहीं तो क्या ? जनता को वे दुष्ट सता रहे हैं तो क्या हम देखते रहें ?" चित्रसेन ने क्रोधित होकर पूछा ।

चित्रसेन तुरन्त जटाओंवाले बरगद वृक्ष की दिशा में चल पड़ा । उग्राक्ष ने भी अपना चेहरा गंभीर बनाया और बोला– "चलिये ! उन दुष्टों को काटकर आज गीधों का भोजन बनायेंगे ।" इसके बाद वह चित्रसेन के पीछे चल पड़ा ।

सब लोग कुछ दूर तक वृक्षों के बीच से चलते रहे, फिर अमरपाल चित्रसेन के सामने आकर बोला–"महाराज, आप से मेरा छोटा-सा निवेदन है । अब तक वे बाघचर्मधारी अपना काम पूरा करके चले गये होंगे । अगर वे लोग वहाँ पर हों भी, तब भी हम उनका कुछ नहीं बिगाड़ पायेंगे । उन भयंकर पक्षियों के रहते हमलोगों का उनसे टकराना आत्महत्या सदृश ही माना जायेगा ।"

उग्राक्ष ने स्वीकृतिसूचक सर हिलाते हुए कहा–"चित्रसेन, अमरपाल के कथन में बहुत हद तक सच्चाई है । हमें जल्दबाजी में नहीं आना चाहिए । रात का अनुभव तुम्हें याद ही है ।"

"महाराज, जटाओंवाले बरगद के पास हम लोग अपने पशुओं को चरा रहे थे कि तभी भयानक पक्षी और उन पर सवार बाघचर्मधारी लोग अचानक हम पर टूट पड़े । वे पशुओं और मनुष्यों को भी उठा ले जा रहे हैं । हम कुछ लोग उनकी आँखों से बचकर भाग आये हैं ।" सबने काँपती आवाज़ में कहा ।

उग्राक्ष से भी राक्षसों ने अलग से यही शिकायत की । वे तो पशुओं को चोरी से लुक-छिपकर उठा लाने के लिए गये थे । पर उनके दुर्भाग्य से बाघचर्मधारी तभी वहाँ आ धमके थे, इसीलिए उन्हें उलटे पाँव भाग आना पड़ा था ।

सारी बातें सुनने-समझने के बाद चित्रसेन को भी लगा कि वह सचमुच दुस्साहस ही करने जा रहा था। वह जान गया कि इससे उसके सैनिकों और उग्राक्ष के राक्षस अनुचरों की बलि ही होनी थी। ज्वालाद्वीप के निवासियों के साथ इस तरह का संघर्ष कोई अनुकूल परिणाम नहीं ला सकता। चित्रसेन के मन में इस बात का दुख और रोष था कि वह अपनी प्रजा की रक्षा करने में असमर्थ और असहाय प्रमाणित हो रहा है। इस तरह वह कितने समय तक शासन कर सकेगा? नागवर्मा ने धवलगिरि पर हमला कर दिया है। अगर उसके पिता पराजित हो गये तो क्या नागवर्मा उस पर आक्रमण किये बिना मान जायेगा?

ऐसे ही कुछ संशय और भय थे जो चित्रसेन के हृदय को मथ रहे थे, तभी अमरपाल बोला—"महाराज, मैं आप का विश्वासपात्र सेवक हूँ। अगर आप आदेश दें तो मैं अग्निकुंड में भी कूद सकता हूँ। मैं जो भी कहूँ, उस पर आप भरोसा रखिये और मेरी बात पर ध्यान दीजिये! सबसे पहले हमें कपिलपुर के निकटवर्ती जंगल में अपना निवास बनाये उन भयंकर पक्षियों का किसी कपटपूर्ण उपाय से नाश करना होगा। फिर उन बाघचर्मधारियों का अन्त करना कोई कठिन काम नहीं होगा।"

"तुमने बताया, अमरपाल, कि वहाँ पर लगभग सौ की संख्या में भयंकर पक्षी हैं। उनका संहार हम कैसे कर पायेंगे?" चित्रसेन ने पूछा।

उन दोनों का वार्तालाप उग्राक्ष बड़ी सावधानी से सुन रहा था। वह जल्दी से जल्दी उस उपाय को जानना चाहता था, जिससे उन पक्षियों का नाश हो। उसने उतावली दिखाते हुए अमरपाल से पूछा—"अमरपाल, जल्दी बताओ, वह उपाय क्या है?"

अमरपाल ने उग्राक्ष की तरफ़ क्रोध और उपेक्षा की दृष्टि से देखा, फिर चित्रसेन की तरफ़ मुड़कर बोला—"महाराज, यह बात

पाषाणी गदा को ज़मीन पर ठोंककर गर्जना करनी चाही, लेकिन चित्रसेन ने उसे रोक दिया और कहा–"अब तुम्हारे गरजने से कोई फ़ायदा नहीं है। जो होना था सो हो गया। अब हमें इतना ही करना है कि इन घायल चरवाहों की मरहम-पट्टी करें और इन्हें इनके घर पहुँचा दें।"

चित्रसेन की बात सुनकर उसके अनुचर और राक्षसगण आगे बढ़ने को हुए, लेकिन चित्रसेन ने उन्हें रोककर कहा–"सबसे पहले उन दुष्टों को यहाँ से चले जाने दो।"

देखते-देखते ज्वालाद्वीप के निवासी पक्षियों पर सवार वे लोग आसमान में ऊँचे उड़ गये। जब वे आँखों से ओझल हो गये, तब चित्रसेन के अनुचर और राक्षसगण घायलों को पट्टी बाँधने में जुट गये। उग्राक्ष हतोत्साहित होकर एक पेड़ के तने से सटकर बैठ गया और बोला–"चित्रसेन, मैं आज तक कभी भयभीत नहीं हुआ, पर अब न मालूम क्यों मेरे मन में डर पैदा हो रहा है। हम इन दुष्टों से अपने राज्य की और अपनी प्रजाओं की रक्षा कैसे कर पायेंगे, कौन से उपाय से?"

चित्रसेन अमरपाल की ओर मुड़कर बोला–"अमरपाल, तुमने कहा था कि ज्वालाद्वीपवासियों के उन भयंकर पक्षियों को मारा जा सकता है। कौन-सा उपाय है वह?"

"महाराज, वे भयंकर पक्षी जिन झोंपड़ों में बँधे रहते हैं, हमें उन्हीं झोंपड़ियों में उनका संहार करना होगा। इसका एक ही उपाय है–वह है उन झोंपड़ियों में आग लगा देना।" अमरपाल ने कहा।

"क्या वह काम संभव है?" चित्रसेन ने पूछा।

"महाराज, अवश्य संभव है। आप मेरे साथ कुछ सैनिकों को भेज दीजिये। मैं कपिलपुर के पासवाले उस जंगल में प्रवेश करूँगा और पहरेदारों का अन्त कर उन भयंकर पक्षियों को ज़िन्दा जला डालूँगा।" अमरपाल ने कहा। (क्रमशः)

"महाराज, इस बारे में भी मैंने एक उपाय सोच रखा है। हम ऐसा करेंगे कि उन्हें..." अमरपाल अपनी बात पूरी करने जा ही रहा था कि सामने के वृक्षों के पीछे बड़ा कोलाहल होने लगा। उग्राक्ष, चित्रसेन और वहाँ उपस्थित सभी लोगों ने कोलाहल वाली दिशा में दृष्टि दौड़ायी। फिर वे लुकते-छिपते उन वृक्षों के पास गये और आड़ में खड़े हो जब उन्होंने सामने की तरफ़ देखा, तब उन्हें एक वीभत्स दृश्य दिखाई दिया।

कुछ भयंकर पक्षी भेड़ों तथा गायों को अपने पंजों में दबाकर इस तरह आकाश में उड़ रहे थे, जैसे कोई बड़ी चील पक्षियों के बच्चों को उड़ा ले जाती है। उन पक्षियों पर सवार बाघचर्मवाले लोग ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहे थे और भाग रहे मवेशियों के पालकों पर भाले फेंक रहे थे। हर सवार के पास भालों के पुलिन्दे थे। मवेशियों के पालक हिम्मत करके पत्थरों और लाठियों से उन पक्षियों का प्रतिकार करने की कोशिश कर रहे थे। पशुओं में भगदड़ मच गयी थी। चारों तरफ़ आतंक का राज्य था।

इस भयंकर दृश्य को देखकर चित्रसेन कम्पित हो उठा। क्रोध से उग्राक्ष का शरीर थरथरा उठा और उसने अपनी

मैंने आप को पहले ही बता दी थी कि कपिलपुर के पास के जंगल में उन भयंकर पक्षियों का अड्डा है। उन पक्षियों को बड़ी-बड़ी झोंपड़ियों में रखा जाता है और उस समय उनके पैरों में मजबूत जंजीरें डालकर उन्हें लोहे के खूंटों से बाँध दिया जाता है। उन पर सवारी करनेवाले लोग पास ही कुटियों में रहते हैं। महाराज, जिस समय वे पक्षी जंजीरों से कसे होते हैं, हमें उसी समय उनका संहार करना होगा।"

"उपाय तो अच्छा है, पर सवाल यह है, उनका संहार कैसे किया जाये? क्या एक-एक को शस्त्र से मारा जाये या अन्य किसी उपाय से?" चित्रसेन ने पूछा।

CHITRA

वचन-भंग

दृढ़व्रती विक्रमार्क वृक्ष के पास लौट आये। उन्होंने वृक्ष से शव उतारा और उसे कंधे पर डाल सदा की भाँति मौन श्मशान की तरफ़ चलने लगे। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने पूछा—"राजन, अर्धरात्रि के समय अकेले इस श्मशान में जो आप कष्ट उठा रहे हैं, उसे देख मुझे लगता है कि आप कोई महान कार्य साधने जा रहे हैं। फिर भी, मेरे मन में यह सन्देह है कि आप के इस कार्य के पूरा होने तक आप की यह दृढ़ लगन बनी रहेगी या नहीं! इस संसार में अगर कोई भी मनुष्य कोई कार्य साधना चाहता है तो उसके लिए चित्त की स्थिरता, वचन की दृढ़ता और ईमानदारी आदि गुणों की नितान्त आवश्यकता होती है। ये न हों तो उसे कोई न कोई बहाना कर अपने वचन से विमुख होना पड़ता है। इसके दृष्टान्त के

बेताल कथा

रूप में मैं आप को विजयपुर की राजकुमारी सुवर्णा की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये!"

बेताल ने कहानी सुनाना आरंभ किया :

एक दिन की घटना है, विजयपुर की राजकुमारी सुवर्णा अपनी ननिहाल राजगाँव से राजधानी लौट रही थी। वह पालकी में थी जिसे चार मजबूत कहार ढो रहे थे। राजकुमारी की सखियाँ दूसरी पालकी में थीं और कई अंगरक्षक सैनिक इनके आगे-पीछे चल रहे थे।

राजधानी अभी चार-पाँच कोस दूर थी। अभी ये लोग एक पहाड़ी घाटी के बीच से गुजर रहे थे, अचानक कुछ लुटेरों ने राजकुमारी की पालकी को घेर लिया। अंगरक्षक सैनिक लुटेरों से जूझ पड़े, लेकिन लुटेरे बहुत अधिक संख्या में थे। उन्होंने उन सैनिकों को पीछे धकेल दिया और राजकुमारी सुवर्णा की पालकी के कपाट खोलने लगे। पर तभी पहाड़ी के ऊपर से ललकारों की आवाज़ें सुनाई देने लगीं और पत्थर लुढ़कने लगे। दो बड़ी शिलाओं के नीचे दबकर लूटेरों का सरदार और उसके तीन साथी मर गये।

इस आकस्मिक आक्रमण से डर कर बाकी लुटेरे इधर-उधर भागने लगे। पर तभी कुछ युवक तलवार खींच कर घाटी में कूद पड़े और उन लुटेरों को घेर लिया। राजकुमारी सुवर्णा के अंगरक्षक भी साहस बटोर कर लुटेरों पर टूट पड़े और कुछ ही क्षणों में उन पर क़ाबू पा लिया।

राजकुमारी सुवर्णा की रक्षा करनेवाले वे युवक राजधानी में युद्धविद्या के प्रदर्शनों में भाग लेने आये थे और अब अपने-अपने गाँव लौट रहे थे। उनके नायक का नाम शेखर था। उसने कुछ माह पहले विजयपुर राज्य के सभी मल्लयोद्धाओं को पराजित कर राजकुमारी के हाथों से "वीरपदक' प्राप्त किया था।

इसके बाद राजकुमारी की पालकी अंगरक्षकों के साथ आगे बढ़ी। शेखर

अपने साथियों के साथ लुटेरों का पहरा देता रहा। दो घुड़सवारों को राजमहल में भेजा गया। सारा वृत्तांत सुनकर राजा प्रतापसिंह ने लुटेरों को पकड़ लाने का आदेश दिया। राजसैनिक लुटेरों को रस्सियों से बाँधकर ले गये।

दूसरे दिन शेखर को महाराजा प्रतापसिंह का निमन्त्रण मिला। शेखर का राजकीय सम्मान किया गया और प्रतापसिंह ने उससे पुरस्कार माँगने का आग्रह किया। शेखर ने विनम्र होकर कहा–"महाराज, मुझे राजकुमारी सुवर्णा से बात करने की अनुमति प्रदान कीजिये। जो पुरस्कार प्राप्त होगा, उसे मैं उन्हीं के हाथों से ग्रहण करूँगा।"

राजा ने अनुमति दी। सुवर्णा ने भेंट के दौरान शेखर के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और पूछा–"बोलो, तुम पुरस्कार में क्या चाहते हो?"

"मैं जो भी पुरस्कार माँगूं, क्या आप उसे देने का वचन दे सकती हैं?" शेखर ने पूछा।

"अवश्य ही, अगर वह मेरी शक्ति से बाहर न हुआ तो!" राजकुमारी ने कहा।

राजकुमारी सुवर्णा का उत्तर सुनकर शेखर खुशी से झूम उठा। उसने कहा–"राजकुमारी, आप मुझे जानती ही हैं। इसके पहले भी आप ने मुझे अपने हाथों से एक पुरस्कार दिया था। मैंने लुटेरों से आप की रक्षा की है। मेरे साहस और

पराक्रम को आप जानती ही हैं। क्या इस विषय में आप कुछ कहेंगी?"

"तुम्हारा साहस, पराक्रम और तत्परता अद्भुत है।" सुवर्णा ने कहा।

"मैं आप के इस वक्तव्य के प्रति कृतज्ञ हूँ। इसीलिए आप से निवेदन करना चाहता हूँ कि मैं आप के साथ विवाह का आकांक्षी हूँ। शायद, यह आप की शक्ति के बाहर नहीं है?" शेखर ने कहा।

शेखर की बात सुनकर सुवर्णा थोड़ी देर मौन रही, फिर बोली–"मैं कह नहीं सकती कि यह मेरी शक्ति के बाहर है अथवा नहीं। फिर भी, मुझे तुम्हारे साथ विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन, मैं इस सारी बातचीत से अपने पिता को अवगत कराना चाहूँगी।"

राजकुमारी की स्वीकृति से शेखर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसी शाम राजकुमारी सुवर्णा ने अपने पिता से कहा–"पिताजी, आप की अनुमति पाने के बाद शेखर मुझसे मिलने आया था। पिताजी, शेखर ने मेरे प्राणों की ही रक्षा नहीं की, बल्कि मेरे सम्मान की भी रक्षा की है। अगर उन नीच लुटेरों ने मेरा स्पर्श कर लिया होता तो मैं निश्चय ही सदा अपने साथ रखनेवाला ज़हर खा लेती। शेखर ने मेरे समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा है। क्या इस विवाह को आप स्वीकृति दे सकते हैं?"

राजा को इस बात की आशा न थी। वे कुछ क्षण चुप रहकर बोले–"क्या तुमने शेखर के विवाह के प्रस्ताव को अपनी स्वीकृति दी है?"

"राजवंश के युवक के साथ ही विवाह हो, मेरा ऐसा कोई आग्रह नहीं है। शेखर जैसे वीर युवक के साथ विवाह करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। बल्कि मुझे यह प्रस्ताव अच्छा ही लगा है।"

"अच्छी बात है! हम इस पर विचार करेंगे।" राजा ने कहा।

दूसरे ही दिन राजा प्रताप सिंह ने शेखर के पास इस आशय का संदेश भेज

दिया कि राजकुमारी के साथ उसका विवाह संभव नहीं है। शेखर यह समाचार पाकर उदास हो गया। वह राजकुमारी से मिला और महाराज के निर्णय को बताने के बाद अन्त में बोला–"राजकुमारी, यदि मैं आप के साथ विवाह नहीं कर पाया तो मृत्यु ही मेरा एकमात्र आधार है।"

राजकुमारी सुवर्णा ने शेखर को समझाकर कहा–"शेखर, तुम चिंता न करो! मैं अवसर पाकर अपने पिता को इस विवाह के लिए राज़ी कर लूंगी।"

शेखर सन्तुष्ट होकर अपने गाँव आनन्दपुर चला गया।

एक वर्ष बीत गया। राजा अचानक अस्वस्थ हो गये। वे रुग्णावस्था में सुवर्णा से अक्सर कहते–"बेटी, पता नहीं, अब मैं स्वस्थ हो पाऊँगा या नहीं? मैं तुम्हारे लिए योग्य वर खोजकर तुम्हारा विवाह करना चाहता था। मुझे बड़ी चिंता है।"

सुवर्णा अपने पिता को शेखर का स्मरण दिलाना चाहती थी कि इस बीच एक भयानक दुर्घटना हो गयी।

सुवर्णा का भाई शक्तिसिंह गुरुकुल में अपनी शिक्षा समाप्त कर विजयपुर लौट रहा था कि रास्ते में उसका घोड़ा बिदक गया और उस पर से गिर जाने के कारण उसका देहान्त हो गया। अपने इकलौते पुत्र की मृत्यु का समाचार सुनकर राजा का दिल टूट गया और वे जी नहीं सके।

इन घटनाओं से राजकुमारी के दिल को बड़ा धक्का लगा। पर अब वही राज्य की उत्तराधिकारिणी थी और उसी के कंधों पर राज्य के संचालन का भार था। उसनें अपने को संभाला और राज्याभिषेक के बाद विजयपुर की रानी बन गयी।

राजपद ग्रहण करने के कुछ दिन बाद रानी सुवर्णा ने अपने एक विश्वसनीय सेवक को आनन्दपुर भेजा, ताकि वह शेखर का समाचार ला सके। सेवक ने आनन्दपुर से लौटकर बताया कि शेखर कुछ दिन पहले अपना गाँव छोड़कर चला गया है।

रानी सुवर्णा ने कुछ दिन और शेखर की प्रतीक्षा करने का निश्चय किया। रानी सुवर्णा कुशल प्रशासिका प्रमाणित हुई। एक बार उसने अपने राज्य की सामान्य प्रजा का सच्चा हाल जानने के लिए छद्मवेश धारण किया और राज्य की सीमा पर स्थित एक गाँव में पहुँची। उसके साथ छद्मवेश में कुछ अंगरक्षक सैनिक भी थे। सुवर्णा जिस गाँव में आयी थी वह धामपुर कहलाता था। यहाँ का शिवमन्दिर दूर-दूर तक प्रसिद्ध था। शिवरात्रि के दिन महिलाएँ बड़ी संख्या में इस मन्दिर में दर्शनों के लिए आती थीं। इधर कुछ समय से पहाड़ी क्षेत्रों में चोरों का बोलबाला हो गया था, इसलिए लोग काफ़ी सतर्क रहते थे। पर क्योंकि मंदिर में आनेवाले भक्तों के पास अधिक चीज़ें नहीं होती थीं, इसलिए वे निर्भय होकर शिवमदिन्र में जाया करते थे।

शिवरात्रि को जब भक्तों का जुलूस प्रारंभ हुआ तो रानी सुवर्णा भी भक्तों की भीड़ में शामिल हो गयी और उसके अनुचर कहीं दूर रह गये। इसी बीच एक पहाड़ी मोड़ पर डाकुओं के एक दल ने भक्तों की उस भीड़ पर आक्रमण कर दिया, जिसमें सुवर्णा शामिल थी। चोरों ने हथियार दिखाकर सुवर्णा को पास खड़ी एक घोड़ागाड़ी में बैठने का निर्देश दिया। वे उस पहाड़ी घाटी में बने एक मकान में ले गये और बोले–"तुम डरो मत! यहाँ आने में तुम्हारा हित ही हित है।"

एक घंटे बाद चोरों का सरदार वहाँ आ पहुँचा। उसने सुवर्णा से कहा–"मैं एक रूपवती कन्या के साथ विवाह करना चाहता था। मेरे सेवकों ने मेरे अनुरूप एक सुन्दरी का चुनाव किया है।" फिर वह कुछ आश्चर्य भरे स्वर में बोला–"मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मैंने तुम्हें इससे पहले भी कभी देखा है!"

"कहीं तुम शेखर तो नहीं हो?" सुवर्णा ने पूछा। चोरों का सरदार चौंक

पड़ा और बोला–"तुम्हें मेरा वास्तविक नाम कैसे मालूम हुआ? मुझे तो सब लोग भीमनायक पुकारते हैं।"

सुवर्णा मुस्कराकर बोली–"इसका मतलब है कि तुमने मुझे नहीं पहचाना। मैं राजकुमारी सुवर्णा हूँ। मैंने तुम्हारे साथ विवाह करने का निश्चय करके अपने एक सेवक को तुम्हारे पास आनन्दपुर भेजा था। पर तब तक तुम वह स्थान छोड़ चुके थे। एक बात और! अब मैं राजकुमारी नहीं, विजयपुर की रानी हूँ।"

"मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि तुम मेरे साथ विवाह के लिए तैयार हो जाओगी। मैंने अपने अनुचरों को एक रूपवती नारी को पकड़कर लाने का आदेश दिया था। भाग्य से वे तुम्हें पकड़ लाये हैं। हम दोनों का इस प्रकार इस स्थान पर मिलना विधि का विधान है।" शेखर ने कहा।

"हाँ! निश्चय ही यह विधि का विधान है।" सुवर्णा ने शेखर की बात का समर्थन किया।

शेखर सुवर्णा के इस समर्थन से परम प्रसन्न हुआ। सुवर्णा ने शेखर के साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट की थी, इसलिए उसने सुवर्णा पर कोई पहरा नहीं बैठाया। सुवर्णा उस मकान के अहाते में स्वेच्छापूर्वक टहलने लगी।

इसी बीच छद्मवेश में सुवर्णा के रक्षक सैनिक वहाँ आ पहुँचे। सुवर्णा ने कुछ संकेतों के द्वारा उन्हें कोई संदेश दिया।

उसी रात राजधानी से आये एक विशिष्ट दल ने उस मकान को घेर कर शेखर एवं उसके अनुचरों को बन्दी बना लिया। राजमहल में लौटने के बाद रानी सुवर्णा ने अन्य लुटेरों के साथ शेखर की भी सुनवाई की और उन सब को फाँसी के तख़्ते पर चढ़ाने का फ़ैसला सुनाया।

बेताल ने विक्रम को यह कहानी सुनाकर पूछा–"राजन, सुवर्णा का यह व्यवहार क्या अत्यन्त नीच और क्रूर नहीं है? सुवर्णा ने शेखर को विवाह का वचन दिया था।

इसके अलावा, उसने रानी बनने पर स्वयं शेखर के गाँव में अपने सेवक को भी भेजा था। पर जब वह शेखर के सामने एक बन्दिनी स्त्री के रूप में लायी गयी, तब एक-दूसरे को पहचानकर उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त की। इसके बाद सुवर्णा का व्यवहार क्या विश्वासघात नहीं है? क्या यह वचन-भंग नहीं है? शेखर ने जब उनकी मुलाक़ात को विधि का विधान बताया, तब सुवर्णा ने भी उसकी बात का समर्थन किया था। फिर अचानक विपरीत आचरण करना क्या मिथ्या आचरण नहीं है? आप इस सन्देह का समाधान अगर जानकर भी न करेंगे तो आपका सिर फूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

तब विक्रमार्क ने यह उत्तर दिया—"जब शेखर ने लुटेरों के चंगुल से राजकुमारी की रक्षा की थी, तब उसके मन में शेखर के प्रति कृतज्ञता का भाव था। इसीलिए पुरस्कार के रूप में जब शेखर ने राजकुमारी से विवाह करने की इच्छा प्रकट की तो राजकुमारी सुवर्णा ने स्वीकार कर लिया। उस समय शेखर न केवल एक वीर, साहसी और पराक्रमी था, बल्कि नीतिवान भी था। पर बाद में वह लुटेरों का एक सरदार है। जो असहाय और निहत्थे लोगों को लूटता है। सुवर्णा ने विवाह का वचन लुटेरों के इस सरदार को नहीं दिया था, वीर युवक शेखर को दिया था। अब रहा विधि का विधान। सुवर्णा एवं शेखर की इस अप्रत्याशित मुलाक़ात को शेखर विधि का विधान कहता है। सुवर्णा एक दूसरे ही अर्थ में उसकी बात का समर्थन करती है। उसका अभिप्राय गूढ़ है—कि यदि सुवर्णा को इस बात का पता न चलता कि शेखर अब लुटेरों का सरदार बन गया है, तो वह उसके साथ विवाह कर लेती और जीवन भर पश्चात्ताप करती। पर इतने आकस्मिक रूप से जो वह सारी वस्तुस्थिति से परिचित हो जाती है, उसे वह विधि का विधान कहती है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

हमारे मन्दिर

बुद्धगया

हजारों वर्ष पूर्व गयासुर नाम के एक राक्षस ने विष्णु को लक्ष्य कर कठोर तपस्या की। असाधारण शक्ति प्राप्त करने के लिए उसने जो तप शुरू किया था, वह अनेक वर्षों तक निर्विघ्न चलता रहा।

गयासुर के इस प्रचण्ड तप को देखकर देवता भयभीत हो उठे। उन्होंने सोचा कि अगर इस असुर की तपस्या फलीभूत हो गयी तो इसे अपूर्व शक्ति प्राप्त हो जायेगी और यह उस दुर्धर्ष शक्ति के अहंकार से साधु एवं सज्जनों के संताप का कारण बन जायेगा। देवताओं ने उसकी तपस्या भंग करने का आयोजन किया।

एक देवता ने गयासुर के पास पहुँच कर कहा—"मैं बहुत थक गया हूँ। मैं तुम्हारे कंधों पर थोड़ा विश्राम करना चाहता हूँ।" गयासुर ने तुरन्त स्वीकार कर लिया। देवता उसके कंधों पर जा बैठा।

इसके बाद अन्य देवताओं ने भी उस देवता की तरह गयासुर के पास जाकर अपनी इच्छाएँ व्यक्त कीं। गयासुर ने प्रसन्नतापूर्वक सब को आश्रय दिया। उसने अपनी देह बढ़ाकर उन सभी देवताओं को कंधों, हाथों पर और गोद में बैठा लिया। थोड़ी देर बाद सारे देवता मिलकर उसे पृथ्वी में धँसाने लगे।

देवताओं के अभिप्राय को गयासुर ने तुरन्त समझ लिया। उसने उन सब देवताओं के भार को सहन कर कहा—"देवताओ, मैं आप लोगों के अभीष्ट को ध्यान में रखकर पृथ्वी के अन्दर चला जाऊँगा। लेकिन, आप सब को मुझे यह वचन देना होगा कि आप सदा मेरे साथ रहेंगे।" देवताओं ने गयासुर की बात मान ली। उसके बाद गयासुर पृथ्वी में धँस गया।

उसी स्थल पर ब्रह्मा ने अपना यज्ञ संपन्न किया। गयासुर की भक्ति एवं विनयशीलता पर मुग्ध हो विष्णु ने उस स्थान पर प्रत्यक्ष हो गयासुर की आत्मा को आशीर्वाद दिया तथा उस स्थान को भी आशीर्वाद दिया, जहाँ गयासुर देवताओं के साथ भूमिसात हुआ था।

विष्णु जहाँ प्रत्यक्ष हुए थे, उस स्थल पर उनके पादपद्म के चिह्न बन गये। गयाक्षेत्र में विष्णुपाद-मंन्दिर का निर्माण इन्दौर की रानी अहल्याबाई ने करवाया था।

गया के इस पुण्य क्षेत्र में लोग पितृ-कार्य संपन्न करने के लिए आते हैं। हर दिशा से असंख्य लोग आकर यहाँ पितरों की संतुष्टि के लिए तर्पण आदि करते हैं।

दिव्यात्मा की भाँति फल्गुनदी इस प्रदेश में अन्तर्वाहिनी के रूप में अदृश्य बह रही है। यहाँ अगर भक्तजन पृथ्वी को खोदते हैं तो तत्काल जल फूट पड़ता है। भक्तों का विश्वास है कि यहाँ का जल अत्यन्त पवित्र और मधुर है।

गौतम बुद्ध ने इसी क्षेत्र में पीपल वृक्ष के नीचे ध्यानमग्न होकर ज्ञानसिद्धि प्राप्त की थी, इसलिए यह बुद्धगया-क्षेत्र कहलाता है । यह क्षेत्र गया से चौदह किलो मीटर की दूरी पर स्थित है । बुद्ध को छाया प्रदान करनेवाले अश्वत्थ-वृक्ष का ही वंशज एक सौ वर्ष पुराना पीपल का वृक्ष यहाँ अब भी मौजूद है ।

यहाँ पर स्थित महाबोधि मन्दिर विलक्षण बौद्ध शिल्प का नमूना है । इस मन्दिर का मुख्य द्वार अद्भुत शिल्पों से सुशोभित है । इस मन्दिर के अन्दर सुवर्ण का मुलम्मा चढ़ायी गयी एक बुद्ध प्रतिमा है । यह मन्दिर कई शताब्दियों से देश-विदेश के कलाप्रेमियों के आकर्षण का केन्द्र रहा है ।

ज्ञानसिद्धि पश्चात बुद्ध ने खड़े होकर इस स्थान से सुदूर तटों की ओर बड़े प्रसन्न और प्रशान्त चित्त से देखा था । अनिमेष लोचन चैत्य महाबोधि मन्दिर के समीप ही यह पवित्र स्थान है ।

असली चोर

शिवपुर नाम के एक गाँव में मुसाफ़िरों की सुविधा के लिए एक धर्मशाला बनायी गयी थी। वहाँ प्रायः लोग रात व्यतीत करने के लिए ठहरते थे। एक दिन सुबह के समय दो यात्री धन की एक थैली के ऊपर आपस में झगड़ा करने लगे।

यह देख शिवपुर के संतरी उन दोनों को पकड़कर मुखिया के पास ले गये।

मुखिया रामदीन बड़ा सच्चा और न्यायप्रिय इंसान था। उसने मोहनलाल और श्यामलाल नाम के इन दोनों यात्रियों से सच्ची बात निकालने की भरसक कोशिश की, पर वे दोनों बराबर इसी बात की रट लगाये रहे कि "यह धन की थैली मेरी है, नहीं, मेरी है!" जब रामदीन सब उपाय कर थक गया तो उसने उन दोनों को एक कोठरी में बन्द करने का आदेश दिया। धन की वह थैली निश्चय ही उन दोनों में से किसी एक की थी और दूसरा आदमी उसे हड़पने का षडयंत्र कर रहा था। पक्का प्रमाण मिलने पर ही असली चोर को पकड़ा जा सकता था। मुखिया असली चोर का पता लगाने के लिए किसी उपाय के बारे में सोचने लगा।

दो-तीन दिन बीत गये। रामदीन यह सोचकर व्याकुल हो उठा कि उन दोनों में से अपराधी तो एक ही है, पर उसके साथ दूसरा निर्दोष भी सज़ा भुगत रहा है।

मुखिया इसी सोच-विचार में था कि उसे समाचार मिला कि राजधानी से एक उच्च अधिकारी गाँवों की स्थितियों का मुआयना करने के लिए निकला है और वह शिवपुर भी आनेवाला है।

मुखिया रामदीन ने गाँव की सीमा पर आकर बल्लभदेव नाम के अधिकारी की अगवानी की और उन दो यात्रियों से

रामनाथ त्रिपाठी
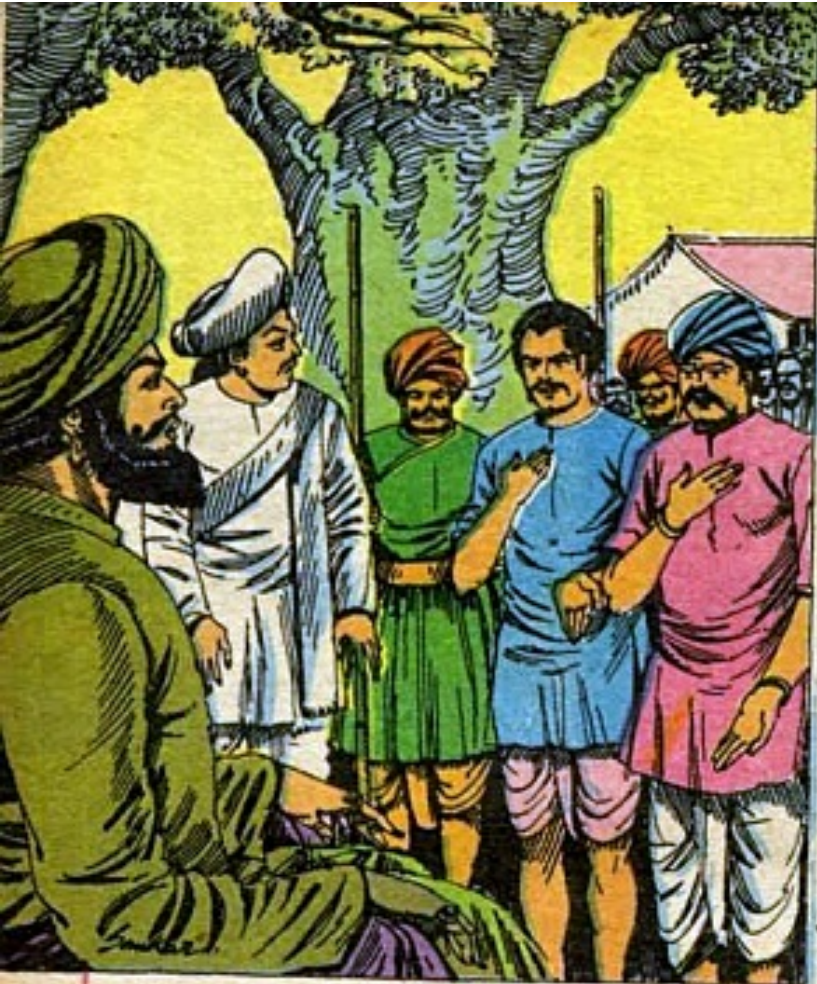
सम्बन्धित समस्या के बारे में बताकर कहा–"महानुभाव, उन दोनों में से एक चोर है और दूसरा उस थैली का हक़दार है। मैं असली चोर का पता नहीं लगा पाया, इसलिए उस दूसरे निरपराध व्यक्ति को भी मुझे अंधेरी कोठरी में रखना पड़ा।"

उच्च अधिकारी बोला–"रामदीन, अपराधियों का पता लगाने के लिए निर्दोषियों को भी कष्ट देना ही पड़ता है।"

मुखिया रामदीन ने जब वल्लभदेव के सामने वह धन की थैली रखी, तो वल्लभदेव अत्यन्त आश्चर्य प्रकट करते हुए बोला–"रामदीन, तुम जिसे जटिल समस्या बता रहे हो, उसका हल निकल आया है। दरअसल, धन की यह थैली मेरी है। तीन दिन पहले किसी ने मेरे यहाँ से चुरा लिया था। वे दोनों ही इसके चोर रहे होंगे।"

अधिकारी के मुँह से यह बात सुनकर मुखिया रामदीन बोला–"महानुभाव, आप ने धन की थैली को देखते ही झट अपनी थैली बता दिया। पर इसके लिए कोई पक्का प्रमाण भी तो होना चाहिए न?"

"रामदीन, तुम बन्द कोठरी से उन दोनों को यहाँ बुलवा लो। मेरे सामने सुनवाई होने पर सच्चाई का पता लग जायेगा।" अधिकारी वल्लभदेव ने कहा।

मुखिया रामदीन ने दोनों को बुलवा लिया, फिर पूछा–"सच-सच बता दो, यह धन तुम दोनों में से किसका है?"

वे दोनों ही पहले की भाँति उसे अपना-अपना बतलाने लगे। मुखिया ने कठोर स्वर में कहा–"यह धन तुम दोनों में से किसी का नहीं है, बल्कि राजधानी से पधारे इन उच्च अधिकारी का है। तुम अब भी सच बोल दोगे तो मैं तुम्हें साधारण-सा दण्ड देकर मुक्त कर दूँगा।"

मुखिया के मुँह से इन शब्दों को सुनकर श्यामलाल विकल होकर बोला–"ऐसा लगता है कि इस राज्य से धर्म उठता जा रहा है। मेरी मेहनत की कमाई को पहले ही एक व्यक्ति हड़पना चाहता था, अब

अपने को उच्च अधिकारी बतानेवाला यह धनीमानी युवक भी मेरे धन की चोरी करने के प्रयत्न में है। ऐसे ईमानदार और बुद्धिमान लोगों का पूर्ण अभाव हो गया, जो न्यायपूर्वक निर्णय कर सकें।"

अब दूसरा यात्री मोहनलाल उत्तेजित होकर बोला–"मुखिया जी, न्याय का निर्णय करना आप के वश की बात नहीं। इसके लिए अत्यन्त धैर्य और सूक्ष्म बुद्धि की आवश्यकता है। पर ये दोनों बातें आप के अन्दर नहीं हैं। कोई अजनबी अपने को उच्च अधिकारी बताते हुए आ धमका और धन की इस थैली पर अपना हक़ जमाने लगा तो आप ने फौरन सच मान लिया और अब आप इसे इसके असली हक़दार से छीनकर एक तीसरे आदमी के हवाले कर देना चाहते हैं।"

मुखिया रामदीन अपने क्रोध पर नियंत्रण रखकर बोला–"पर यह बात तुम इतनी दृढ़तापूर्वक कैसे कह सकते हो कि यह धन इन उच्च अधिकारी महोदय का नहीं है?"

"सुनिये, कान खोलकर! श्यामलाल नाम का यह आदमी धर्मशाला में टिकने से पहले धर्मपुरा गाँव के एक व्यापारी से धन की यह थैली ले रहा था। यह मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा है। आप स्वार्थ से
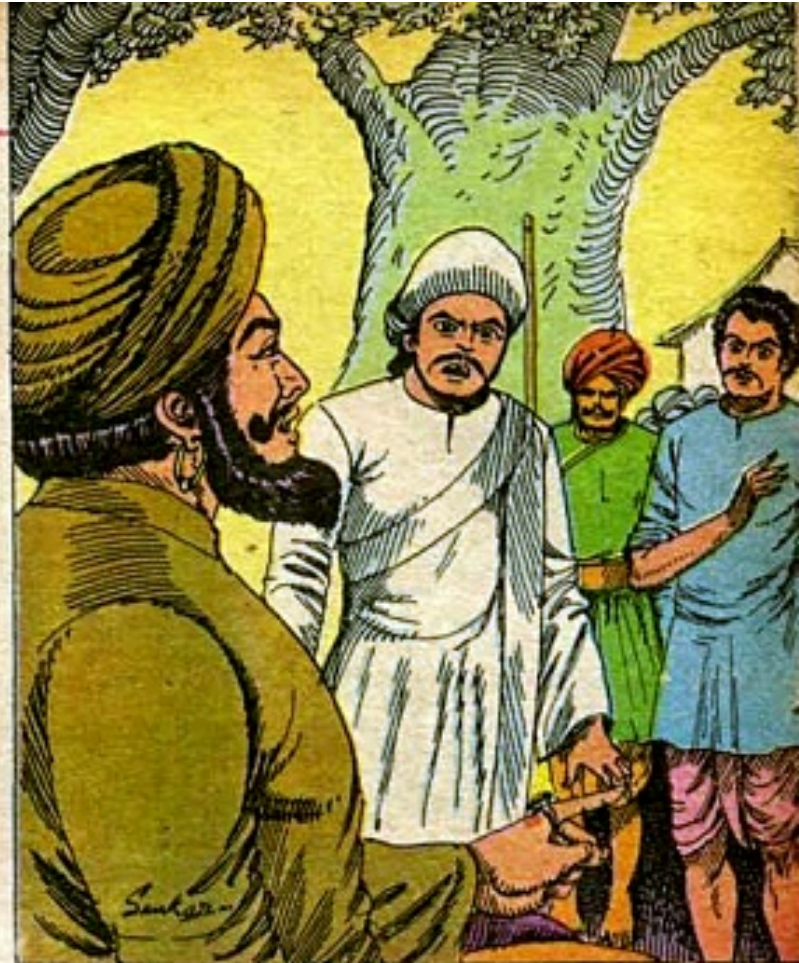
प्रेरित होकर एक ऊँचे अधिकारी के दबाव में आकर इस तरह का अन्यायपूर्ण फ़ैसला सुना रहे हो। मैं राजा से आप की शिकायत करूँगा।" मोहनलाल ने कहा।

मुखिया रामदीन ने वल्लभदेव को क्रोधभरी दृष्टि से देखा। वह कुछ कहने ही जा रहा था कि वल्लभदेव ने मुस्कराकर कहा–"चाहे जो भी हो, चोर का पता लग गया है। मनुष्य परिस्थितिवश ही भला-बुरा बनता है, यह बात सच है।"

वल्लभदेव की बात सुनकर मुखिया क्रुद्ध हो बोला–"आप राजअधिकारी के वेश में एक दग़ाबाज आदमी हैं और हमारे महाराज

को अपयश का भागी बना रहे हैं। मैं अभी आप को राजधानी में ले जाकर राजा के समक्ष उपस्थित करता हूँ।"

"मैं भी गवाह के रूप में आप के साथ चलूँगा।" मोहनलाल ने कहा।

राज अधिकारी वल्लभदेव ने सब को बड़ी प्रशसाभरी प्रसन्न दृष्टि से देखा। फिर कहा—"मुखिया जी, आप के मन में न्याय-निर्णय के प्रति जो दृढ़ लगन है, उसे देख मुझे अपार हर्ष हो रहा है। मोहनलाल जो धोखे से धन की यह थैली हड़पना चाहता था, उसके मन में भी इस बात की जागरूकता है कि अगर वह धन उसे प्राप्त नहीं होता है तो वह किसी तीसरे के पास न जाकर उसके वास्तविक हक़दार को ही प्राप्त हो।" फिर वल्लभदेव ने रामदीन के कंधे पर थपकी देकर कहा—"निर्दोष व्यक्ति कभी दंड का पात्र न बने, इस न्याय-भावना से प्रेरित होकर तुमने सच्चे निर्णय का प्रशंसनीय प्रयत्न किया है। इसलिए मैं तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ। रामदीन, मैं वल्लभदेव नहीं, इस देश का राजा महीपसिंह हूँ।" यह कहकर राजा ने अपना असली रूप प्रकट किया।

राजा महीपसिंह को अपने सामने देखकर रामदीन, श्यामलाल और मोहनलाल आश्चर्यचकित हो गय।

इसके बाद राजा महीपसिंह ने धन की थैली अपने हाथ से श्यामलाल को दी, फिर मुखिया से कहा—"मेरे लिए तुम्हारी तरह के एक सच्चे का होना अत्यन्त आवश्यक है। मैं तुम्हें अपनी सलाहकार-समिति का सदस्य नियुक्त करता हूँ। सलाहकार को एक अंगरक्षक की आवश्यकता भी होती है। मैं इस सत्यवादी मोहनलाल को अगर इस पद पर नियुक्त करूँ तो तुम्हें आपत्ति तो न होगी?"

"महाराज, आप की इच्छा ही मेरी इच्छा है।" मुखिया ने कहा।

मोहनलाल को भी अपार आनन्द हुआ। उसने हाथ जोड़कर राजा एवं मुखिया को प्रणाम किया और चुपचाप खड़ा रहा।

पाताल में वास कर रहे सुमाली को जब पता लगा कि उसके तीनों पोतों ने ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किये हैं, तो उसका डर जाता रहा। वह अपने मंत्री मारीच, प्रहस्त, विरूपाक्ष तथा महोदर को साथ लेकर ठाठ से निकल पड़ा। वह रावण के पास पहुँचा और उसे गले लगाकर प्रसन्न होकर बोला–"बेटा, इतने समय बाद मेरी कामना सफल हुई। जिस विष्णु के भय से हमें लंका छोड़कर पाताल जाना पड़ा था, उस विष्णु का भय अब नष्ट हो गया। इसका कारण यही है कि तुमने ब्रह्मा से उत्तम वर प्राप्त किये हैं। वास्तव में लंका नगर हम राक्षसों का ही है। तुम्हारे सौतेले बड़े भाई कुबेर ने होशियारी दिखाकर अधिकार कर लिया है। तुम अवसर की ताक में रहो और कुबेर को समझा-बुझाकर या धन का लोभ दिखाकर या बलपूर्वक ही लंका को पुनः प्राप्त कर लो। इसके बाद तुम निश्चिन्त होकर लंका पर राज्य करो। तुम्हें राक्षस-वंश के उद्धार करने का श्रेय प्राप्त होगा।"

सारा वृत्तान्त सुनकर रावण ने कहा–"पितामह, आपका कथन नीतिसम्मत नहीं है। कुबेर तो हमारे लिए पिता के सदृश हैं। आप के मुँह से एसी बातें निकलनी नहीं चाहिये और हमें भी सुननी नहीं चाहिये।"

रावण के मुख से ऐसी बात सुनकर सुमाली निरुत्तर रह कया। इसके बाद

३. रावण का लंका में प्रवेश

सुमाली के विश्वसनीय मंत्री प्रहस्त ने रावण को एकान्त में पाकर इस प्रकार समझाया–"वत्स, तुमने अपने पितामह से जो बात कही, वह तनिक भी संगत नहीं है। उसके लिए भाई-बन्धु का भेद ही क्या है? भाई-बन्धुओं के बीच वैर का होना अस्वाभाविक नहीं है। अदिति एवं दिति सहोदर बहनें हैं। दोनों ने कश्यप प्रजापति की पत्नियाँ बन देवों और दैत्यों को जन्म दिया है। पर विष्णु ने दैत्यों एवं राक्षसों को भगाकर तीनों लोकों को देवताओं के अधीन कर दिया। केवल इस लंका पर ही नहीं, समस्त भूमंडल पर किसी समय असुर एवं राक्षसों का राज्य था। हम तुमसे कोई अपराध करने को नहीं कह रहे हैं। इसलिए तुम मेरा कहना मान लो। हमारे वंश के सभी लोग सुखी होंगे।"

रावण बहुत देर तक सोचता रहा, फिर उसने कुछ निर्णय लिया और प्रहस्त को दूत बनाकर कुबेर के पास यह संदेश भेजा :

"अग्रज, इस समय आप के अधीन लंका नगर राक्षसों का है। अगर आप इस नगर को उसके वास्तविक अधिकारियों को सौंप देंगे तो आप धर्म का पालन करनेवाले प्रमाणित होंगे।"

प्रहस्त ने कुबेर के पास पहुँच कर रावण का संदेश सुनाया। तब कुबेर ने रावण के पास अपना यह उत्तर भेजा–"प्रिय अनुज, हमारे पिता ने जब मुझे यह लंका नगर सौंपा, उस समय उस नगर में कोई राक्षस न था। मैं अपने यक्षों के साथ यहाँ निवास करता हूं। मेरा राज्य, मेरा नगर, मेरा वैभव-सब क्या तुम्हारा भी नहीं है? तुम यहाँ आकर सुखपूर्वक रहो। हम दोनों एक ही पिता के पुत्र हैं। ऐसी स्थिति में हम दोनों के बीच भेदभाव कैसा?"

इस प्रकार प्रहस्त के द्वारा रावण के पास संदेश भेजकर कुबेर अपने पुष्पक विमान पर सवार होकर अपने पिता के पास पहुँचा और उन्हें सारा वृत्तान्त सुनाया।

विश्रवस ने कुबेर के मुंह से सारा वृत्तान्त सुनकर कहा–" बेटा, मेरी बात सुनो। रावण ने जब यह बात मुझसे कही थी तो मैं उस पर कुपित हो गया था। वरदान प्राप्त होने के कारण इस समय वह अभिमान से भरा हुआ है। तुम लंका को छोड़ दो और कैलास पर्वत पर चले जाओ और वहीं पर अपना निवास बना लो। वहाँ मंदाकिनी नदी बहती है, उसमें सुवर्ण कमल हैं। उस पर्वत पर सदा देवता, गन्धर्व, अप्सराएँ, उरग और किन्नर विहार किया करते हैं। तुम इस समय रावण से शत्रुता मोल न लो।"

कुबेर ने अपने पिता का परामर्श स्वीकार किया और अपनी पत्नी, बच्चों, मंत्रियों एवं अन्य परिजनों तथा धन-वाहनों को साथ लेकर कैलास-पर्वत पर पहुँचा।

इसी बीच प्रहस्त रावण के पास लौटकर बोला–" रावण, तुम्हें एक शुभ समाचार दे रहा हूँ। लंका नगर खाली हो गया है। कुबेर अपने परिवार के साथ वहाँ से चला गया है। तुम लंका नगर के लिए प्रस्थान करो और हम सबके सहयोग से राज्य-संचालन करो!"

प्रहस्त द्वारा यह समाचार और सुझाव पाकर रावण अपने छोटे भाई तथा परिवार को लेकर लंका पहुँचा। वहाँ अत्यन्त वैभव के साथ उसका राज्याभिषेक हुआ। राक्षस-दलों से सारा लंका नगर भर गया और उसमें एक नयी शोभा आ गयी। इधर रावण लंका-नगर का अधिपति बना तो उधर कुबेर अलका नगरी का शासक बना।

लंका का राजा बनने के बाद रावण ने अपनी बहन शूर्पणखा का विवाह कालकेय वंशी विद्युज्जिह्व के साथ धूमधाम से संपन्न कर दिया।

कुछ दिन बीत गये। एक बार रावण वन में आखेट के लिए गया। वहाँ एक प्रौढ़ पुरुष तथा उसके साथ एक युवती को देखकर रावण ने उस पुरुष से पूछा–

"आप कौन हैं? इस निर्जन वन में इस तरुणी को साथ लेकर क्यों घूम रहे हैं?"

उस प्रौढ़ पुरुष ने उत्तर दिया—"वत्स, मैं दिति का पुत्र मय हूँ। तुमने हेमा नाम की एक अप्सरा का नाम सुना होगा। देवताओं ने मेरा विवाह हेमा के साथ कर दिया। यह कुमारी हम देनों की सन्तान है। इसका नाम मन्दोदरी है। चौदह वर्ष हुए हेमा मुझे छोड़ स्वर्ग में चली गयी। मैं अपनी इस कन्या के लिए योग्य वर की खोज में भ्रमण कर रहा हूँ। हेमा से मेरे दो पुत्र भी हैं—मायावी और दुन्दुभि। तुमने मेरे बारे में पूछा तो मैंने सब बता दिया। अब तुम अपना परिचय भी दो।"

"मैं पुलस्त्य ब्रह्मा का पौत्र, विश्रवस ब्रह्म का पुत्र हूँ। मेरा नाम दशग्रीव है।" रावण ने अपना परिचय दिया।

जब मय को पता लगा कि रावण महर्षियों का वंशज है, तो अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उसने अपनी कन्या के विवाह का प्रस्ताव रावण के सामने रखा। रावण ने मय का अनुरोध स्वीकार कर लिया। उसी समय उसने वहाँ अग्नि प्रज्वलित की और मय ने अग्नि की साक्षी में मन्दोदरी और रावण का विवाह संपन्न किया। मय ने प्रसन्न होकर अपने जामाता रावण को एक महाशक्ति प्रदान की। वह एक महान अस्त्र था, जिसे मय ने भारी तपस्या के बाद प्राप्त किया था। कालान्तर में उसी अस्त्र के प्रयोग से रावण लक्ष्मण को मूर्छित कर सका था।

रावण मन्दोदरी के साथ वन से लौट आया और लंका आने पर उसने अपने दोनों छोटे भाइयों के विवाह का संकल्प किया। उसने कुम्भकर्ण का विवाह वैरोचन की पोती वज्रज्वाला के साथ और विभीषण का विवाह शैलूष नामक गन्धर्व की पुत्री सरमा के साथ बड़ी धूमधाम से संपन्न किया।

रावण, कुम्भकर्ण और विभीषण लंका में अपनी पत्नियों के साथ सुखपूर्वक

गृहस्थ जीवन बिताने लगे। कुछ समय बाद रावण की पत्नी मन्दोदरी ने मेघनाद को जन्म दिया। कहा जाता है कि वह बालक जन्म लेते ही मेघगर्जन कर रो पड़ा था, इस कारण उसका नामकरण मेघनाद किया गया। वह बालक अपने माता-पिता का सर्वाधिक प्रिय था। यही मेघनाद इन्द्रजित कहलाता था। राम-रावण युद्ध में यह लक्ष्मण के हाथों मारा गया।

एक दिन रावण की सभा लगी हुई थी। तब कुम्भकर्ण ने जोर से जंभाइयाँ लेकर कहा–"भैया, मुझे तो बड़ी जोरों से नींद आ रही है। कृपया मेरे शयन का प्रबन्ध कर दीजिये।"

यह नींद ब्रह्मा के वरदान द्वारा प्राप्त नींद थी। रावण ने कुम्भकर्ण के लिए अद्भुत शिल्प का एक निद्राभवन बनवाया। वह भवन अत्यन्त विशाल था। उसमें स्फटिक शिला के स्तम्भ थे, हाथीदाँत के तोरण थे। उस भवन की दीवारों और फ़र्श में सुवर्ण और रत्नों की कारीगरी की हुई थी। कुम्भकर्ण उस भवन में आराम से दीर्घकाल तक सो गया।

कुम्भकर्ण तो गहरी नींद में डूब गया, लेकिन रावण को चैन नहीं थी। वह अपने असाधारण बल के अभिमान से देवता, ऋषि, यक्ष और गन्धर्वों को मनमाने ढंग से सताने लगा। जिस प्रकार मत्त हाथी तालाब में प्रवेश करके उसे गंदला बना देता है, उसी प्रकार रावण देवताओं के नन्दनवन तथा अन्य उद्यानों को ध्वंस करने लगा।

अपने छोटे भाई के कुकृत्यों से कुबेर को बड़ा क्लेश पहुँचा। वह सोचने लगा कि रावण के ये सारे काम उनके महान वंश को कलंक लगानेवाले हैं। उसे समझाने के लिए कुबेर ने रावण के पास एक दूत भेजा। उस दूत ने लंका में प्रवेश करके सबसे पहले विभीषण से भेंट की। विभीषण ने दूत का यथोचित सत्कार किया, फिर बड़े भाई कुबेर की कुशल-

इस बीच मैंने नियमपूर्वक रौद्रव्रत के आचरण का निश्चय किया और हिमालय में जाकर पार्वती सहित परमेश्वर के दर्शन किये। बिना किसी कामना के मैं देवी पार्वती के सौन्दर्य पर मुग्ध हुआ और बायीं आँख को उन पर संकेन्द्रित कर उन्हें निहारने लगा। दूसरे ही क्षण मेरी आँख जलकर पीतवर्ण की हो गयी। इसके बाद हिमालय के एक अन्य स्थान पर जाकर मैंने पुनः रौद्रव्रत का आरंभ किया। मेरा व्रत सामाप्त होते ही भगवान शिव मुझ पर प्रसन्न हुए और उन्होंने मुझसे कहा कि पुरातन काल में कभी उन्होंने भी यह व्रत पूरा किया था। उन्होंने मुझे अपना मित्र बने रहने का आदेश दिया है। उन्होंने मुझे 'एकाक्षी पिंगल' यह नाम भी दिया है। उनसे विदा लेकर जब मैं अपने अलका नगरी में आया तो मुझे तुम्हारे दुष्कृत्यों का पता लगा। हमारा वंश महान है। तुम वंश पर कलंक लगानेवाले इन कृत्यों को छोड़ दो। मैंने सुना है कि देव और ऋषि तुम्हारी मृत्यु के उपायों पर विचार कर रहे हैं। अतः समय रहते सन्मार्ग पर आ जाओ!"

क्षेम जानकर दूत से उसके आगमन का कारण पूछा। दूत ने अपने आगमन का कारण बताया और फिर राजसभा में रावण के समक्ष कुबेर के संदेश को कह सुनाया :

"मेरे अनुज भाई, तुमने आज तक बहुत अधिक यश प्राप्त किया है। अब तुम इस यश से सन्तुष्ट हो जाओ और उत्तम मार्ग पर चलना आरंभ करो। तुमने नन्दन-वन का जो विध्वस किया है, उसे मैंने अपनी आँखों से देखा है। मैंने सुना है कि तुम ऋषियों का वध करने से भी नहीं चूकते। मुझे यह पता चला है कि तुमहारे द्वारा सताये गये देवता तुम से प्रतिशोध लेने का प्रयत्न कर रहे हैं।

दूत से कुबेर का यह संदेश पाकर रावण कुपित हो गया और बोला–"अरे दूत, मैं संदेश सुनानेवाले तुझे और संदेश भेजनेवाल

कुबेर को अभी अच्छा पाठ पढ़ाता हूँ। कुबेर आज इतने महान बन गये कि मुझे हितोपदेश देने लगे। आज तक मैं उन्हें इसलिए क्षमादान देता रहा कि वे मेरे अग्रज हैं और पिता के समान हैं। पर, उनका संदेशा पाने के बाद मेरे मन में तीनों लोकों पर विजय पाने की इच्छा जन्म ले रही है। अपने बड़े भाई के निमित्त से मैं सारे दिक्पालों का विनाश करूँगा।" यह कहकर रावण ने कुबेर के दूत को कृपाण से मार डाला और राक्षसों से कहा कि वे उसका आहार करें। इसके बाद उसने रथसज्जा की आज्ञा दी और तीनों लोकों को जीतने की कामना से निकल पड़ा।

सर्वप्रथम रावण ने कुबेर पर आक्रमण करने का निश्चय किया। उसने महोदर, प्रहस्त, मारीच, शुक, सारण और धूम्राक्ष नाम के छह महा पराक्रमी मंत्रियों को अपने साथ लिया और कैलास पर्वत की तरफ़ प्रस्थान कर दिया। कुछ ही दिनों में नदियाँ, पहाड़ और वनप्रदेश पार कर वह कैलास पर्वत पर पहुँचा। वहाँ रावण को अनुचरों के साथ विश्राम करते देख यक्षों ने सोचा कि वह निश्चय ही कुबेर का छोटा भाई होगा। उन्होंने तत्काल यह सम्वाद कुबेर को दिया।

कुबेर ने तुरन्त यक्षों का सैन्य दल तैयार किया और उन्हें रावण के साथ युद्ध करने के लिए भेज दिया। असंख्य यक्षों ने रावण तथा उसके मंत्रियों पर आक्रमण करके उन्हें चारों तरफ़ से घेर लिया। युद्ध आरंभ हुआ। रावण के एक-एक मंत्री ने एक-एक हज़ार यक्षों के साथ युद्ध किया। रावण ने इस प्रकार यक्षों को नष्ट करना प्रारंभ किया, जैसे सूखी घास को अग्नि नष्ट कर डालती है। उस महा संग्राम में अनेक यक्ष मारे गये और शेष प्राण लेकर भाग खड़े हुए।

यह समाचार मिलते ही कुबेर ने और भी बड़ी संख्या में यक्षों की सेना तैयार की

और उसे रावण से युद्ध करने के लिए भेज दिया। इस सेना में संयोध कंटक नाम का एक यक्ष भी था। उसने मारीच पर चक्रायुध का प्रयोग करके उसे पहाड़ पर से नीचे गिरा दिया। मारीच थोड़ी देर बाद होश में आया और फिर से युद्ध के लिए सन्नद्ध हुआ। यह देख यक्ष के होश उड़ गये और वह युद्ध क्षेत्र से भाग खड़ा हुआ।

अलका नगरी के द्वारपाल के रूप में एक वीर यक्ष खड़ा था। रावण ने द्वार के तोरण से उस यक्ष को मार डाला। इन सारे दृश्यों से घबराकर यक्ष भयभीत हो युद्धक्षेत्र से भाग गये और नदियों तथा गुफाओं में छिप गये।

दूसरी बार भेजे गये यक्ष-सैन्य की यह दुर्दशा देख कुबेर ने मणिभद्र नाम के एक यक्ष को राक्षसों के साथ युद्ध करने के लिए भेजा। मणिभद्र ने अपने साथ हज़ार यक्षों को ले जाकर युद्ध आरंभ किया। वे लोग अनेक प्रकार के आयुध लेकर राक्षसों पर टूट पड़े। इसके बाद दोनों पक्षों के बीच द्वन्द्व युद्ध चला। उस युद्ध में प्रहस्त ने एक हज़ार तथा महोदर ने भी एक हज़ार यक्षों का संहार किया। पर मारीच ने अकेले ही दारुण रूप धारण कर दो हज़ार यक्षों को मार गिराया। मायाजाल से अपरिचित यक्ष भला राक्षसों के सामने कैसे टिकते?

इसके बाद भी मणिभद्र ने भयंकर युद्ध किया। धूम्राक्ष ने मणिभद्र के वक्ष पर मूसलों का प्रहार किया, फिर भी वह विचलित नहीं हुआ और उसने अपनी गदा का भीषण प्रहार धूम्राक्ष के सिर पर किया, जिससे वह चक्कर खाकर धराशायी हो गया। यह देख रावण क्रोधित होकर मणिभद्र पर टूट पड़ा। मणिभद्र ने रावण पर एक साथ तीन शक्तियों का प्रयोग किया, पर रावण इससे तनिक भी विचलित नहीं हुआ और उसने मणिभद्र के सिर पर भीषण वार किया। इस आघात से मणिभद्र का मुकुट एक ओर को लुढ़क गया और उसे 'पार्श्वमौलि' नाम प्राप्त हुआ।

आपसी झगड़ा

शिक्षा समाप्त होने के बाद रमापति की नौकरी मिर्ज़ापुर में जमींदार की कचहरी में लग गयी। रमापति ससुराल से अपनी पत्नी गिरिजा को लिवा लाया, मिर्ज़ापुर में किराये का घर लेकर रहने लगा। गिरिजा देहात में ही जन्मी थी और देहात में ही बढ़ी हुई थी। उस शहर के जीवन के साथ तालमेल बैठना अत्यन्त कठिन जान पड़ रहा था। कचहरी जाने से पहले पति के लिए रसोई तैयार कर भोजन देना उससे कभी न पड़ा।

आखिर एक शाम कचहरी से लौटकर रमापति ने कह ही दिया—"मैं नहीं जानता कि तुम खाना कितने बजे तक तैयार कर सकोगी, लेकिन याद रखना, कल से मुझे समय पर कचहरी पहुँचना है।"

उस रात गिरिजा सोयी नहीं। जब जागते-जागते आधी रात बीत गयी, तब वह उठी और उसने खाना पकाना आरंभ किया। उस दिन उसने रमापति को समय पर खाना देकर कचहरी के लिए विदा किया।

रमापति अभी गली का नुक्कड़ पार ही कर रहा था कि अचानक एक अजनबी ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोला—"अरे, हम आज दो साल बाद मिल रहे हैं।"

रमापति बोला—"भाई, आप अन्यथा न लें, मैं तो आप को बिलकुल नहीं जानता।"

अजनबी खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला—"मैं तुम्हारी शादी में नहीं आया, इसलिए नाराज़ हो गये हो? वीरेश, मैंने तुम्हें उसी समय चिट्ठी लिख दी थी।"

रमापति आश्चर्यचकित होकर बोला—"मेरा नाम रमापति है, वीरेश नहीं। मुझे जल्दी कचहरी पहुँचना है।" यह

विष्णुकांत

कहकर वह अपना हाथ छुड़ाने की कोशिश करने लगा। पर अजनबी ने अपनी पकड़ ढीली नहीं की, बोला–"तुम भले ही अपने को वीरेश मानने से इनकार कर दो, पर तुम्हारी दायीं हथेली पर जो तिल है, वह कहाँ जायेगा?"

रमापति खीजकर बोला–"महाशय, मेरे केवल बायें हाथ की छिगुनी पर तिल है। अब आप मेरा हाथ छोड़ दो।"

अजनबी ने रमापति का हाथ छोड़कर कहा–"क्षमा करो, भाई! मैंने तुम्हें अपना मित्र वीरेश समझा। उसकी और तुम्हारी शक्ल में काफ़ी समानता है।"

उस शाम जब रमापति कचहरी के बाद घर पहुँचा तो गिरिजा ने पूछा–"आज तो तुम समय से पहले ही कचहरी पहुँच गये थे न?"

"नहीं, गिरिजा! जब मैं गली का नुक्कड़ पार कर रहा था तो एक आदमी मुझे जोंक की तरह चिपट गया।" यह कहकर रमापति ने गिरिजा को सारी कहानी कह सुनायी।

अपने पति की बातों में वीरेश का नाम सुनकर गिरिजा चौंककर बोली–"अरे, यह तो मैं बताना भूल ही गयी। आज तुम्हारे बचपन का दोस्त वीरेश आया था।"

वीरेश का नाम सुनकर रमापति चौंक उठा, बोला–"वीरेश नाम का कोई आदमी मेरा दोस्त नहीं है। बताओ तो, वह कहाँ है?"

"वह अपना सन्दूक़ एक कमरे में रख कर सो गया था। अभी थोड़ी देर पहले बाजार हो आने की बात कहकर वह गया है।" गिरिजा ने उत्तर दिया।

रमापति के मन में सन्देह हुआ। उसने कमरे में जाकर उस आदमी का सन्दूक खोलकर देखा। उसके अन्दर केवल चार-पाँच ईंटें थीं।

"यह तो कोई ठग मालूम होता है। गिरिजा, तुम सब चीज़ों को अच्छी तरह

देख लो। कहीं वह हमारा कुछ लेकर तो नहीं चला गया?" रमापति ने कहा।

इसके बाद दोनों ने कमरे में रखे अपने सन्दूकों को खोलकर देखा। उनमें से चार सौ रुपये और गिरिजा की एक जोड़ी सोने की चूड़ियाँ गायब थीं।

रमापति अपनी पत्नी पर क्रुद्ध होकर बोला—"गँवारूपन की भी हद होती है? एक अजनबी को खाना खिलाकर तुमने उसे सामानवाले कमरे में सुला दिया?"

"मुझे क्या मालूम था कि वह धूर्त और बदमाश है? उसने तुम्हारा नाम लेकर अपना परिचय दिया और तुम्हारी छिगुनी के तिल की बात भी बतायी। तुमने जो मूँगे की अंगूठी पहन रखी है, उसने जब उसका हवाला दिया तो मेरा विश्वास पक्का हो गया।" गिरिजा रुआँसी होकर बोली।

"अब तो इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं रह गया है कि सुबह जिस व्यक्ति ने मेरा हाथ पकड़ा था, वही घर में चोरी कर ले गया है। उसने मेरे मुँह से सारी बातें जानकर यह ठगी दिखलायी।" रमापति बोला।

"मैं सोचती हूँ कि वह वही आदमी था। मैं मानती हूँ कि देहात की हूँ, पर तुम तो शहर के थे। तुम्हारी अक्ल कहाँ गयी थी?" गिरिजा ने ताना देकर कहा।

इसके बाद गिरिजा और रमापति आपस में झगड़ा करने लगे और झगड़ा
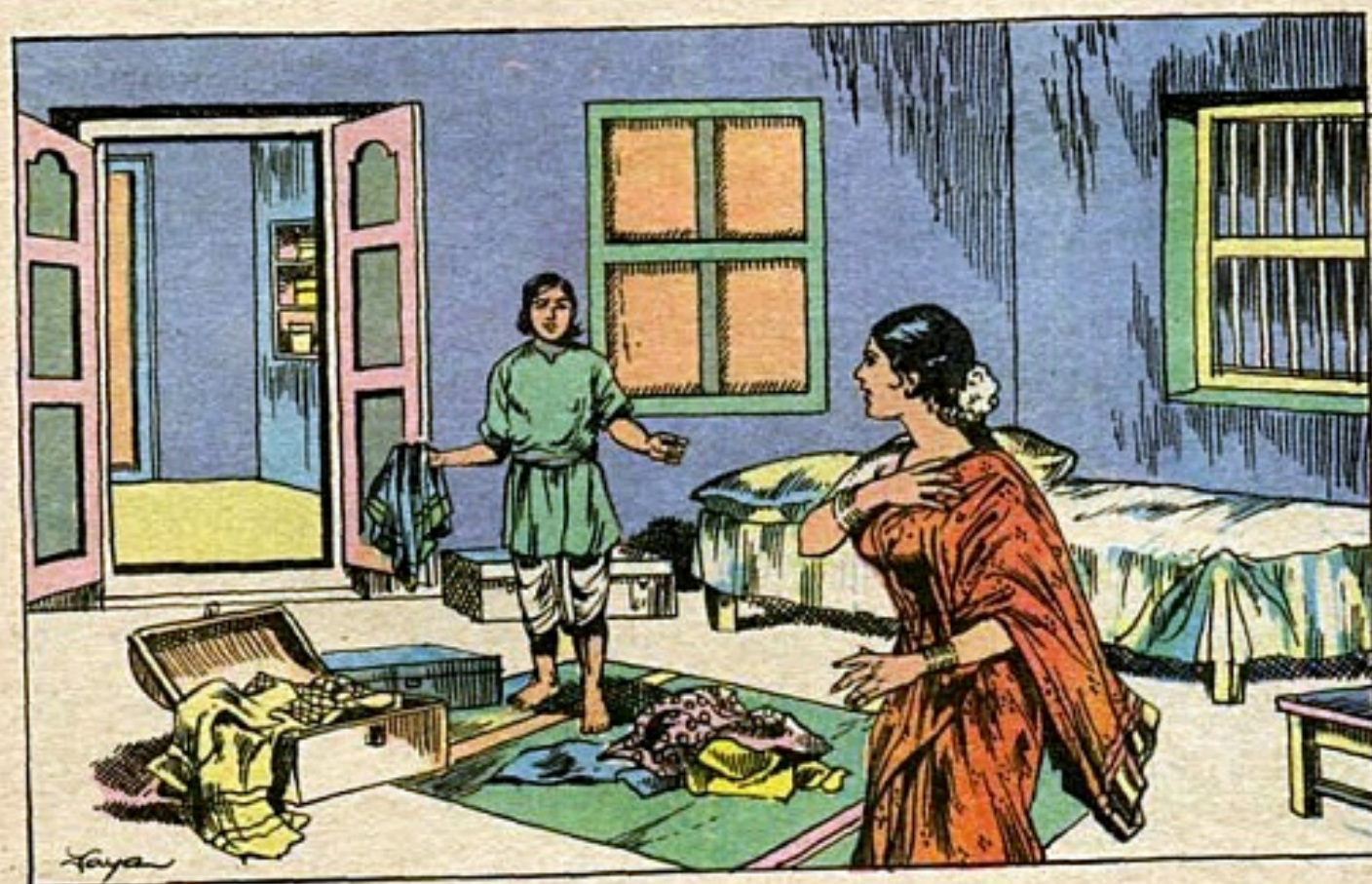
इतना बढ़ा कि दोनों ने रात को खाना भी नहीं खाया।

दूसरे दिन सुबह होते ही रमापति अपने पड़ोसी गाँव बीरमपुर गया और नारायण से मिलकर उसे साथ ले आया। नारायण रिश्ते में गिरिजा का चाचा लगता था। उसी ने गिरिजा और रमापति का रिश्ता तय करवाया था। वह लोगों के रिश्ते तय करवाता और उनके घरों में खा-पीकर अपना समय गुज़ारता था।

रमापति नारायण को अपने घर ले आया और बोला—"इसके साथ मेरी शादी कराने में आप ने तीन झूठों का आश्रय लिया है।"

"कौन-से झूठ?" नारायण ने पूछा।

"आप ने कहा था न, कन्या तेज़, बुद्धिमती और विनयशील है। पर यह तो इतनी मूढ़ है कि सूरज के ऊपर आ जाने तक भी अपनी रसोई तैयार नहीं कर पाती। एक ठग को घर में प्रवेश देकर इसने उसे खाना खिलाया, गहने-कपड़ेवाले कमरे में उसे सोने की जगह दी, तो यह कैसी बुद्धिमती है? जिसके नाम का यह मंगलसूत्र पहनती है, उसी से झगड़ा करने में बाज नहीं आती, यह कैसी विनयशील है?" रमापति बोला।

गिरिजा ने आँसू भरकर सारा वृत्तान्त नारायण को सुनाया। नारायण बोला—"जो हुआ, उसमें तुम दोनों का ही दोष नहीं है। इस प्रकार की धोखाधड़ी का मूलकारण घर में बड़े बुजुर्गों का न रहना है। मैं यह कमी पूरी करूँगा। बेटी, आज से तुम रोज़ मुट्ठी भर चावल और रांध दिया करना।" यह कहकर वह पिछवाड़े में कुएँ के पास स्नान करने चला गया।

पन्द्रह दिन बीत गये। एक दिन रमापति ने गिरिजा से पूछा—"तुम्हारे चाचा और यहाँ कितने दिन तक डेरा डालनेवाले हैं?"

"मैं क्या जानूँ? आप स्वयं जाकर उन्हें लिवा लाये हैं, अब उन्हें यहाँ से

भेजने की जिम्मेदारी भी आप की है।" गिरिजा ने टोका।

रमापति ने सोचा कि यह नारायण तो शनिग्रह की तरह घर में घुस गया है। वह उससे पिंड छुड़ाने के लिए परेशान हो उठा। आखिर उसे एक उपाय सूझा।

रमापति की एक विधवा मौसी थी। पाँच-छह वर्ष पहले उसने रमापति को बुलाकर उस पर अपनी इकलौती बेटी सुजाता के विवाह का भार सौंपा था। पर सुजाता न केवल झगड़ालू और कठोर थी, बल्कि घर के कामकाज में भी बिलकुल निकम्मी थी। उसके साथ शादी करने कोई भी तैयार न होता था। इस समय उसकी उम्र तीस वर्ष की हो गयी थी।

रमापति अगले दिन जब शाम को कचहरी से लौटा तो उसने नारायण से कहा—"चाचाजी, मेरी विधवा मौसी हैं। उनकी एक लड़की है। उसकी शादी अभी तक नहीं हुई। अगर आप उसकी शादी कहीं तय करवा दें तो मैं आप का यह उपकार कभी नहीं भूलूंगा।"

नारायण ने मंजूरी दी और दूसरे ही दिन वहाँ से चल पड़ा। रमापति और गिरिजा बोझ को टला जान बहुत प्रसन्न हुए। सुजाता जैसी लड़की की शादी तय करवाने में नारायण चाचा को साल भर से कम नहीं लगेगा, यह सोचकर वे निश्चिंत हो गये। लेकिन, तीसरे ही दिन सवेरे नारायण एक किराये की गाड़ी से

उतरा। उसे देख गिरिजा और नारायण सकते में आ गये।

"अरे, क्या मेरी बहन सुजाता का रिश्ता इतनी जल्दी तय हो गया?" रमापति ने पूछा।

"ओह, यह कौन-सा बड़ा काम था? पर तुम लोग यह तो पूछो कि वर कौन है?" नारायण खुशी से फूल रहा था।

"वह तो आप ही बतायेंगे।" रमापति ने कहा।

"अरे यही नारायण!" कहकर नारायण ठठाकर हँस पड़ा और बोला–"सुजाता को मैं पसन्द आ गया और सुजाता मुझे पसन्द आयी। यह देख तुम्हारी मौसी ने मुझसे कहा–"अब और कहीं वर ढूंढ़ने की क्या ज़रूरत है, तुम्हीं मेरी लड़की के साथ शादी कर लो!" आगामी बुधवार को मुहूर्त रखा गया है। यह शुभ समाचार सुनाने और शादी का निमंत्रण देने के लिए तुम लोगों के पास आया हूँ। साथ ही, एक और खास बात तुम्हें बताना चाहता हूँ!"

"क्या है वह?" रमापति और गिरिजा ने एक साथ उत्सुकता से पूछा।

"एक कहावत है न! 'आपसी झगड़ा, तीसरे का नफ़ा।' तुमने भी देख लिया न कि तुम दोनों का झगड़ा मेरे लिए फ़ायदे का हो गया? देखो, पति-पत्नी के बीच आपसी तनाव और झगड़े सहज ही होते रहते हैं। पर बेहतर यह होता है कि तीसरे व्यक्ति को बीच में डाले बगैर इन झगड़े-फ़सादों को स्वयं निबटाना चाहिए। ऐसा न करने पर मुझ जैसा तीसरा व्यक्ति आकर घर में अड्डा जमा लेता है। वह उन आपसी झगड़ों को निपटाने में उतनी रुचि नहीं रखता, जितनी कि मुफ़्त के रहने और खाने-पीने में। असली बात यही है। अब तुम्हारी और मेरी क़िस्मत से यह शादी तय हो गयी है, वरना मैं तुम्हारे घर से इतनी जल्दी निकलनेवाला नहीं था। अच्छा, तो अब मैं चला।" यह कहकर नारायण ने किराये की गाड़ी की तरफ़ क़दम बढ़ाये।

विचित्र वसीयत

जेरूसलम नगर में जावेद हसन नाम का एक व्यापारी रहता था। उसके सलामत नाम का इकलौता बेटा था। जावेद हसन व्यापार के काम पर अपना अधिक समय दूर देशों में बिताया करता था, इसलिए उसका बेटा घर पर रहकर ही शिक्षा प्राप्त करता था।

एक बार जावेद हसन व्यापार के लिए दूर देश गया था। गुलाम खुर्शीद भी उसके साथ था। अचानक जावेद बीमार पड़ गया। जावेद अपनी मौत को निकट जान अपने बेटे सलामत की चिंता में व्याकुल रहने लगा। अगर वह अपनी सारी जायदाद अपने बेटे के नाम पर लिख देता है तो उसका गुलाम खुर्शीद बड़ी आसानी से उस पर कब्ज़ा करके उसके पुत्र को भिखारी बना देगा। उससे बचाने के लिए वसीयत को क्या रूप दिया जाये, इस बात पर गंभीरतापूर्वक विचार करके जावेद एक निर्णय पर पहुंचा और उसने वसीयतनामा लिखने के लिए एक लेखाकार को बुला भेजा।

रशीद नाम का एक कुशल लेखाकार जावेद के पास आया। उसने जावेद हसन की इच्छानुसार वसीयतनामा लिख दिया। उस वसीयत में यह लिखवाया गया था कि जावेद हसन की सारी संपत्ति गुलाम खुर्शीद की होगी, लेकिन जावेद का पुत्र सलामत उस सारी मिल्कियत में से कोई एक मनचाही चीज़ पाने का अधिकारी होगा। इस विचित्र वसीयतनामे को रशीद ने बड़ी चतुरता से लिखा था।

व्यापारी जावेद हसन के मरने के बाद उसका गुलाम खुर्शीद वह वसीयतनामा लेकर जेरूसलम लौट आया। उसने वसीयत के आधार पर व्यापारी की सारी संपत्ति पर कब्ज़ा कर लिया।

यहूदी लोक-कथा

अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर सलामत ने खुर्शीद से कहा कि उसके पिता की सारी संपत्ति उसके हवाले कर दी जाये।

पर खुर्शीद ने अस्वीकार कर दिया और वसीयतनामा अपने मालिक के पुत्र सलामत को दिखाकर कहा–" तुम्हारे पिता ने मरने से पहले यह वसीयतनामा लिखवाया था। इसके अनुसार तुम्हारे पिता की सारी संपत्ति पर मेरा अधिकार है। तुम इस संपत्ति में से केवल कोई एक चीज़ माँगने के हक़दार हो!"

सलामत अपने पिता की इस वसीयत को देख चकित रह गया। उसकी समझ में न आया कि क्या किया जाये। सलामत अपने पिता के एक वयोवृद्ध मित्र यूनुस के पास गया। उसके पिता अक्सर मुश्किल पर इनसे सलाह लिया करते थे।

यूनुस बड़े मेधावी और व्यवहारकुशल पुरुष थे। उन्होंने सलामत की बातें बड़ी सावधानी से सुनीं और कहा–"बेटा सलामत, तुम बिलकुल चिंता न करो। तुम्हारे पिता ने बड़ी सूझ-बूझ के साथ यह वसीयत लिखवायी है। कल तुम कचहरी में आ जाओ और गुलाम खुर्शीद से भी कह दो कि वह वसीयतनामा लेकर कचहरी आ जाये। वहाँ तुम मेरी सलाह के अनुसार काम करना।"

दूसरे दिन सुबह कचहरी में सलामत और गुलाम खुर्शीद दोनों हाज़िर हुए। न्यायाधीश के समक्ष जावेद हसन का वसीयतनामा पढ़ा गया। वसीयतनामे का सारांश ध्यान से सुनने के बाद न्यायाधीश ने सलामत से पूछा–"बताओ, तुम अपने पिता की संपत्ति में से क्या चाहते हो?"

इस सवाल का जवाब वृद्ध यूनुस ने सलामत को पहले ही बता दिया था। सलामत ने खुर्शीद को दिखाकर कहा–"मैं इस गुलाम को लेना चाहता हूँ।"

इसके बाद न्यायाधीश ने गुलाम खुर्शीद को जावेद हसन के पुत्र सलामत के अधीन कर दिया। गुलाम के अधीन हो जाने पर उसके अधीनस्थ सारी संपत्ति भी जावेद हसन के असली उत्तराधिकारी सलामत को मिल गयी।

एक गाँव में चार गप्पी युवक थे। वे हमेशा गप्पों के गोलगप्पों से दूसरों का मनोरंजन किया करते थे और अपनी कोरी कल्पनाओं से सबको चाकित कर देते थे।

एक दिन गाँव की सीमा पर बनी सराय में पड़ोसी गाँव से प्रेमनाथ नाम का एक किसान आकर ठहरा। वह किसी शादी मे जा रहा था, इसलिए उसने बड़े क़ीमती वस्त्र पहन रखे थे चारों गप्पी युवकों ने सोचा कि किसी तरह इसके कपड़े हड़प लिये जायें। वे कुछ निश्चय करके सराय में पहुँचे और प्रेमनाथ से इधर-उधर की बातें करने लगे।

चारों गप्पी ऊँची उड़ान भरने में तो कुशल थे ही, उन्होंने पड़ोसी गाँव के युवक प्रेमनाथ से कहा, "देखो भाई, हम एक दाँव लगाते हैं। यहाँ मौजूद हर आदमी अपना कोई विचित्र अनुभव सुनायेगा। अगर सुननेवालों में से किसी ने उस अनुभव पर अविश्वास प्रकट किया तो उसे सुनानेवाले का गुलाम बन जाना होगा।" प्रेमनाथ ने सबके साथ यह शर्त स्वीकार कर ली। चारों गप्पी बहुत खुश हुए। वे जानते थे कि उनकी कहानियों पर विश्वास करना असंभव बात है। उन्होंने समझ लिया कि पड़ोसी गाँव का यह युवक अव्वल दर्जे का मूर्ख है और वह अवश्य ही फँस जायेगा।

चारों गप्पियों में से पहले ने अपनी कथा यों प्रारंभ की: "जब मैं अपनी माँ के पेट में था, तब उसने मेरे पिता से कहा कि वह घर के सामनेवाले जामुन के पेड़ के जामुन खाना चाहती है। मेरे पिता ने कहा कि वे उस ऊँचे पेड़ पर चढ़ने में असमर्थ हैं। मेरे भाइयों के सामने जब यह बात आयी तो उन्होंने भी यही जवाब दिया। मुझे अपनी माँ पर बड़ी दया आयी। तब मैं उसके पेट से बाहर निकला और जामुन के पेड़ पर चढ़कर सारे फल तोड़ लाया और उन्हें रसोईघर में रख दिया। उसके बाद मैं फिर चुपचाप अपनी माँ के

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

पेट में घुस गया। मेरी माँ ने बहुत सारेजामुन फल खाये और बाक़ी फलों को सारेगाँव में बाँट दिया उसके बाद भी जब जामुन समाप्त नहीं हुईं, तब माँ ने उन्हें घर के आँगन में फेंक दिया। उन जामुन-फलों का ढेर इतना बड़ा हो गया कि गली में से देखने पर हमारा मकान दिखाई नहीं दिया।"

यह कहकर पहला गप्पी पड़ोसी गाँव के प्रेमनाथ की तरफ़ देखने लगा। प्रेमनाथ ने उसकी बात पर विश्वास प्रकट करते हुए स्वीकृति में अपना सिर हिला दिया। बाकी तीनों गप्पियों ने भी इसी तरह सिर हिला दिया।

उसके बाद दूसरे गप्पी ने अपनी कहानी आरंभ की: "मेरी उम्र जब सात दिन की थी, तब मैं जंगल में सैर करने के लिए निकला। वहाँ मुझे इमली का एक पेड़ दिखाई दिया। उसमें सूखे फल लटक रहे थे। मुझे बड़ी भूख लगी थी। इसलिए मैं झट पेड़ पर चढ़ गया और पेट भरकर इमली के फल खाये। इससे मेरा पेट भारी हो गया। खुमारी छा गयी और नीचे उतरना संभव नहीं हुआ। इसलिए मैं गाँव में जाकर एक सीढ़ी उठा लाया। उसे इमली के वृक्ष से सटाकर मैं उस सीढ़ी के सहारे नीचे उतर आया। वह तो भाग्य से मुझे सीढ़ी मिल गयी थी, वरना मुझे पेड़ पर ही रह जाना पड़ता।"

इस गप्प के उत्तर में भी प्रेमनाथ ने विश्वास प्रकट कर सिर हिलाया, शेष तीनों गप्पियों ने भी ऐसा ही किया।

अब तीसरे गप्पी ने अपनी कहानी प्रारंभ

कीः "मैं जब नवयुवक ही था कि मुझे खरगोश जैसा एक जानवर दिखाई दिया।मैंने उसका पीछा किया तो वह जानवर भागकर एक झाड़ी में छिप गया। मैं भी उसके पीछे झाड़ी में घुस गया, लेकिन वह खरगोश नहीं, एक बाघ था। जब मुझे निगलने के विचार से उसने अपना मुँह खोला तो मैंने उसे समझाया कि मुझे निगलना सरासर अन्याय है क्योंकि मैंने तो खरगोश समझकर उसका पीछा किया था। उसने मेरी बात पर यक़ीन नहीं किया और वह अपना मुहँ खोलकर मुझ पर झपटने को हुआ। मैं खीज उठा। मैंने से उसके जबड़ों में अपना दायां हाथ डालकर उसे चीर डाला। फिर क्या था, बाघ के दो टुकड़े हो गये।"

प्रेमनाथ ने इस कहानी पर भी अपना सिर हिला दिया। शेष तीनों गप्पियों ने भी उसका अनुकरण किया। अब चौथे गप्पी ने अपनी कहानी प्रारम्भ कीः "मैं पिछले वर्ष मछलियों का शिकार करने गया, पर एक भी मछली मेरे हाथ न लगी। बाकी मछुआरों से जब पूछा, तो उन्होंने यही बताया कि उनके जाल में भी एक भी मछली नहीं फँसी। नदी के तल में कुछ होगा, यह सोचकर मैं नाव में से पानी में कूद पड़ा। नदीतल में पहाड़ जितनी बड़ी एक भारी मछली थी। मैं भूख से परेशान था। मैंने वहीं पर आग सुलगायी और मछली को भूनकर पूरी मछली खाली। उसके बाद मैं नाव में सवार होकर घर लौट आया"

इस कहानी पर भी अपना विश्वास प्रकट करते

हुए प्रेमनाथ ने अपना सिर हिलाया । बाकी गप्पियों को भी विवश होकर अपना सिर हिलाना पड़ा ।

अब कहानी सुनाने की बारी प्रेमनाथ की थी । उसने अपनी कहानी इस प्रकार प्रारंभ की:

"कुछ साल पहले मेरे यहाँ कपास का एक खेत था । उसमें एक पौधा बहुत ही बड़ा था । वह लाल रंग का था । प्रारंभ में इस पौधे में न एक टहनी थी, न एक पत्ता । उसके बाद उसमें चार टहनियाँ निकल आयीं । एक-एक टहनी में एक-एक फल लगा । चारों फलों को काटा तो उसमें से चार नौजवान निकल आये । वे नौजवान मेरे खेत के फलों से निकले थे, इसलिए वे मेरे गुलाम थे । मैंने उनसे अपने खेत का काम कराया। पर वे अव्वल दर्जे के आलसी थे । इसलिए एक दिन मौक़ा पाकर भाग निकले । मैं उनकी खोज में घर से चल पड़ा । आखिर मैंने उन्हें यहाँ पकड़ लिया । बताऊँ, वे लोग कौन हैं? वे तुम्हीं चारों हो । अब चुपचाप मेरे साथ खेत में चलो !"

प्रेमनाथ की यह कहानी सुनकर चारों गप्पियों ने सिर नीचा कर लिया । उनके सामने बड़ी उलझन पैदा हो गयी । यदि वे कहानी को सच कहते हैं तो उन्हें इस चालाक आदमी का गुलाम बनना पड़ेगा और अगर वे कहानी को झूठ कहते हैं तो दाँव हार जाने के कारण भी उन्हें गुलाम बनना पड़ेगा ।

सराय में उन सबकी गप्प सुन रहे मुसाफ़िरों ने गप्पियों से पूछा, "तुम लोग बतला दो कि यह कहानी सच है या झूठ? बोलते क्यों नहीं?" पर उन चारों ने कोई उत्तर नहीं दिया । वे गूंगे मौन बने रहे ।

अब प्रेमनाथ बोला, "अच्छी बात है । तुम लोगों के बदन पर जो कपड़े हैं, वे तुम उतार कर मुझे दे दो, मैं तुम लोगों को मुक्त कर दूँगा ।"

चारों गप्पियों के गोलगप्पे फूट गये । उन्हें अपने कपड़े प्रेमनाथ को देने पड़े । प्रेमनाथ उनके कपड़े लेकर अपने रास्ते चला गया ।

बिना नमीवाला प्रदेश

ऐसा माना जाता है कि चिली देश का आटकामा रेगिस्तान विश्व का एक मात्र ऐसा प्रदेश है जो किसी भी प्रकार की नमी से पूरी तरह मुक्त है। लगभग ४०० वर्षों से वहाँ उल्लेखनीय वर्षा का अभाव रहा है।

भूगर्भ में खिलनेवाला पौधा

आस्ट्रेलिया में पाया जानेवाला रिजान थेलिया गार्डनेरी नामक फूल का पौधा भूगर्भ में ही पुष्पित होता है।

महावृक्ष

विश्व का सबसे बड़ा महावृक्ष केलिफोनिया में है। लोगों के द्वारा प्यार से जनरल षर्मन नाम से पुकारा जानेवाला यह वृक्ष २७२ फुट ऊँचा है। इसका व्यास ७९.१ फुट है और इसका वज़न २०३० टन है।

एक नयी ज़बर्दस्त सनसनाहट! सवेरे सवेरे...

पेपरमिंट और पुदीने की ये सनसनाहट तेज़ी से विकसित हो रहे एक ऐसे फ़ार्मूले में है, जो आपके दांतों को चहकती सफ़ेदी और सांसों को सचमुच ताज़गी देता है.
नया पॉण्ड्स टूथपेस्ट. ये ब्रश करने में एक नयी उमंग जगाए, उसे मज़ेदार बनाए. आपके बच्चे तो इससे और भी बढ़िया तरह से ब्रश करेंगे.

नये पॉण्ड्स टूथपेस्ट का एक ट्यूब आज ही ख़रीदिए. और अपनी हर सुबह एक सुहानी सनसनाहट से भर लीजिए.

Pond's TOOTHPASTE
Pond's TOOTHPASTE

नया
पॉण्ड्स्
टूथपेस्ट
स्वस्थ दांत और ताज़ी सांसों का सवेरा

OBM 9795 HIN

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जनवरी १९८७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।
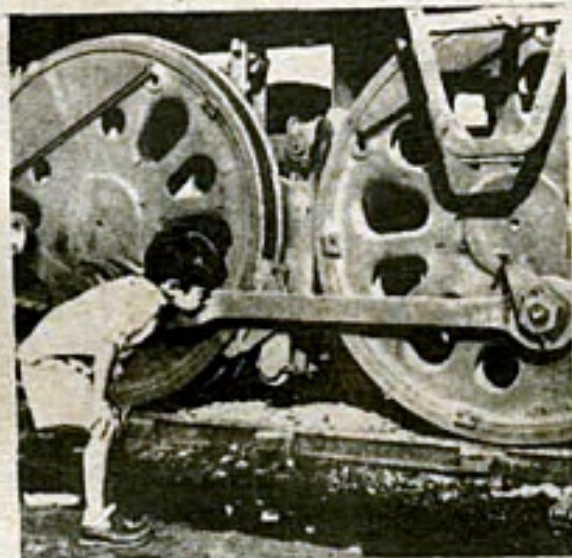
M. Natarajan

P. Balasubramanian

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ नवम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा! ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

सितम्बर के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : हंसी है जिंदगी!

द्वितीय फोटो : सखी संग दिल्लगी!!

प्रेषक : मनोज गोहिल, २६, डाक बंगला कॉलनी, भाजपुरा, जि. मंदसौर (म.प्र.) ४५८७७५

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

सुपर रिन की चमकार ज़्यादा सफ़ेद

किसी भी अन्य डिटर्जेंट टिकिया या बार से ज़्यादा सफ़ेद

हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन